ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

जुलाई, 2013

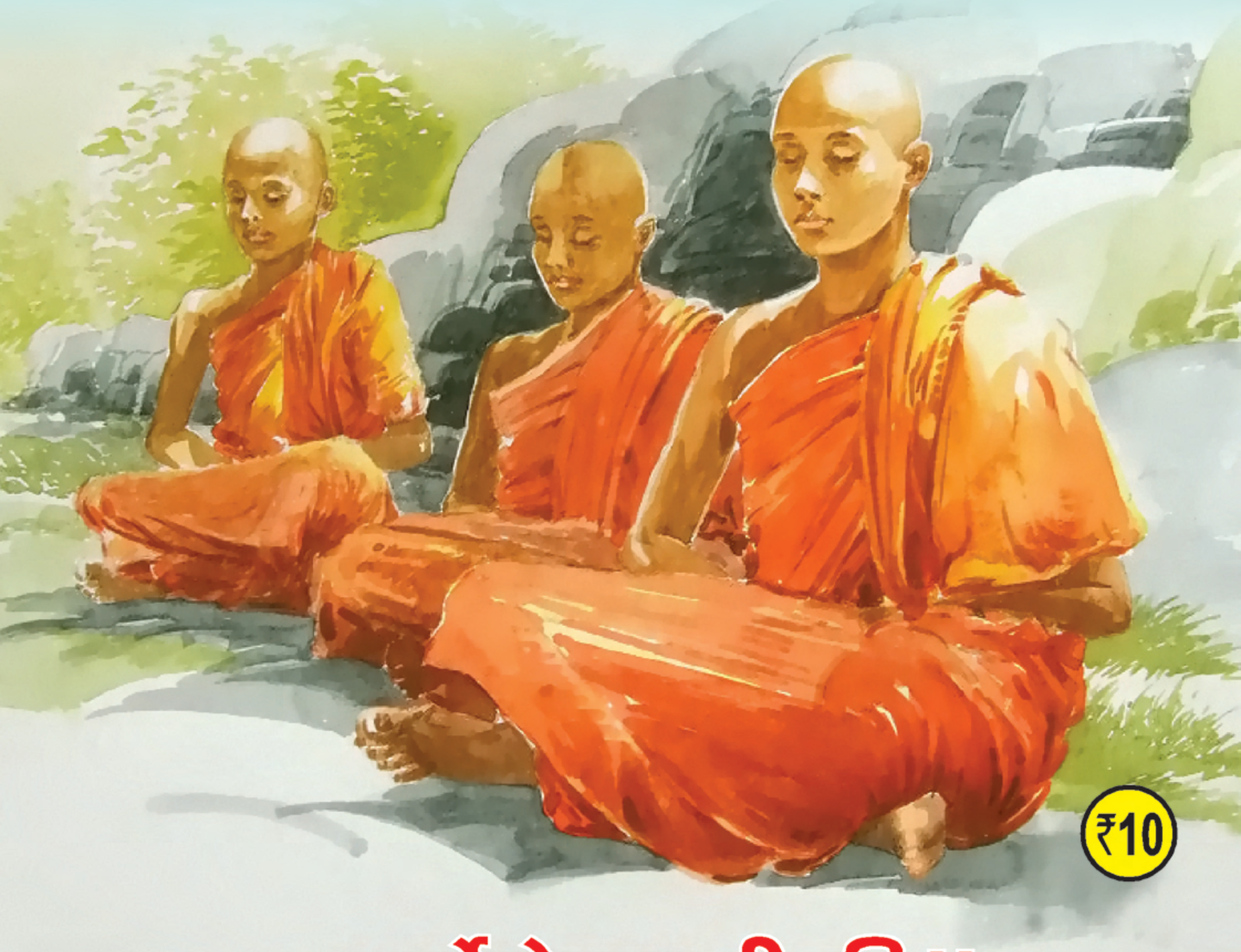

₹10

भर्गो देवस्य धीमहि।।

वेद प्रचार मण्डल व आर्य समाज सफीदों के तत्वावधान में सफीदों मण्डी में
आयोजित पाखण्ड खण्डन महासम्मेलन का आयोजन किया गया।

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में ऐमिटी संस्थान में
आयोजित युवक चरित्र निर्माण शिविर के चित्र।

गुरुकुल भवानीपुर कच्छ में स्वामी शान्तानन्द जी के ब्रह्मत्व में आयोजित २१ कुण्डीय यज्ञ व आदर्श परिवार सम्मेलन के चित्र।

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

शान्तिधर्मी

जुलाई, २०१३

वर्ष : १५ अंक : ६ आषाढ़ २०७०
सष्टि संवत्-१९६०८५३११४, दयानन्दाब्द : १९०

सम्पादक	:	चन्द्रभानु आर्य (चलभाष ०८०५६६-६४३४०)
संयुक्त सम्पादक	:	सहदेव समर्पित (चलभाष ०६४१६२-५३८२६)
उपसम्पादक	:	सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक	:	सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक	:	यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक	:	राजेशार्य आट्टा, डॉ० विवेक आर्य, नरेश सिहाग बोहल
सहयोग	:	आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, श्रीपाल आर्य, बागपत, महेश सोनी, बीकानेर, भलेराम आर्य, सांघी, कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
विधि परामर्शक	:	जगरूपसिंह तंवर
कार्यालय व्यवस्थापक	:	रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा	:	बिशम्बर तिवारी

मूल्य

एक प्रति	:	१०.०० रु०
वार्षिक	:	१००.०० रु०
आजीवन	:	१०००.०० रु०

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

प्रेरणा स्तम्भ

सत्य सूर्य के समान होता है, जो कुछ काल के लिए बादलों में छिप तो सकता है, परन्तु उसके बाद जब वह अपनी किरणों से बादलों का छेदन कर चमकता है तब उसका तेज पहले से भी अधिक होता है।

क्या? कहाँ?....

आलेख

ईश्वर विश्वासी को भय कैसा?	६
आधुनिक युग में वेदों की उपयोगिता	९
सरदार अर्जुनसिंह : तीन पीढ़ियों की आहुति	१३
प्राकृतिक आपदाएँ और ईश्वर	१६
वृद्ध जनों को सम्मान दें	१८
बंधन से मुक्ति की प्रार्थना	१९
हम रक्षा के लिए किसे पुकारें	२०
मार्जन मंत्र पवित्रता का अभ्यास	२२
कब्ज के पन्द्रह कारण	२४

कहानी/प्रसंग

लकड़ी का कटोरा-२७, छोटा आदमी बड़ा आदमी, वीतराग संन्यासी-२८

कविताएँ- १७, २७, २९

स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ७ चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ८, बाल वाटिका २६, भजनावली २९

वेद-विचार

सामवेद आग्नेय पर्व

पद्यानुवाद : स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

जातः परेण धर्मणा यत्सवृद्भिः सहाभुवः।
पिता यत्कश्यपस्याग्निः श्रद्धा माता मनुः कविः।।९०।।

परम धर्म से युक्त देव! तुम परमपुरुष कहलाते हो।
भक्तों की आवृत्ति सहित ये स्तुतियाँ सुन आ जाते हो।।
कश्यप[1] जो पश्यक पशु मैं हूँ उसके तुम हो अग्नि पिता।
श्रद्धा[2] माता[3] मनु[4] कवि हो कर वेदों की करते कविता।।

१ विषयों का दर्शक २ सत्य को धारण करने वाला ३ निर्माण करने वाला ४ मननशील

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

व्यावहारिक धर्म

❒चन्द्रभानु आर्य

मनुष्य जीवन की सफलता के लिए ईश्वरीय वाणी वेद में जो उपाय बताए गए हैं, और जिनका आप्त पुरुषों ने साक्षात्कार किया है। वे पूर्णतः अनुभूत और सफल हैं। वैदिक दर्शन के किसी एक छोटे से वाक्य पर विचार करके कई लोग संसार के विख्यात वैज्ञानिक कहला गए। खेद है कि बिना किसी भेदभाव के मानव मात्र के लिए जिस अनुभूत मार्ग का उपदेश ऋषियों ने किया है, उसको आज लोग भूल गए हैं। बल्कि उससे दूर हो गए हैं और आधुनिक वर्ग में प्रायः यह धारणा सी ही बन गई है कि धर्म और ईश्वर के विचार की मानव जीवन की व्यावहारिक सफलता के लिए कोई आवश्यकता नहीं है।

यदि इस विषय में थोड़ा सा भी विचार किया जाए तो हमें इसके ठीक विपरीत निष्कर्ष प्राप्त होगा। वास्तव में यह कहना अव्यावहारिक, अतार्किक और तथ्यों के विपरीत है। वास्तविकता यह है कि धर्म के बिना सफलता पाई ही नहीं जा सकती। इस जीवन में यदि कहीं किसी प्रकार की सफलता पाई जा सकती है तो वह केवल धर्म से ही पाई जा सकती है। जो व्यक्ति धर्म के स्वरूप को समझता है, वह इस बात से कभी इन्कार नहीं कर सकता। धर्म जब जीवन के बाद की यानि मृत्यु के पश्चात् की सफलता की निःश्रेयस् की बात करता है तो प्रायः लोग यही समझ बैठते हैं कि इसका जीवन की व्यावहारिकता से कोई संबंध नहीं है। वास्तव में धर्म वही है जो निःश्रेयस् के साथ अभ्युदय की भी गारंटी देता है, और यही वास्तव में वैदिक धर्म है। धर्म से ही इस लोक और परलोक में सब प्रकार की सफलता प्राप्त की जा सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो जो इस लोक और परलोक में सफलता दिलाने वाला है उसी को धर्म कहते हैं। ईश्वर भी हमें वही आचरण करने की आज्ञा देता है जिससे हमें पूर्ण सफलता प्राप्त हो। इसलिए ईश्वर की आज्ञापालन और धर्म से एक ही तात्पर्य समझा जाता है।

धर्म की यह विशेषता है कि यह जब धारण किया जाता है तो हमारे अन्दर ऐसी योग्यताएँ और क्षमताएँ उत्पन्न करता है जो हमें सफलता की ओर ले जाती हैं। धर्म के पालन से व्यक्ति में पात्रता आती है। ये पात्रताएँ व्यक्ति को परलोक की सिद्धि के साथ इस लोक में सफलता दिलाती हैं। क्योंकि इस धर्म की यह विशेषता है कि जीवन और जीवन के बाद की सफलताएँ एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। वैदिक चिन्तन में तीन प्रकार के ऋणों का विचार है। कर्ज उतारे बिना व्यक्ति के मुक्त होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। कर्ज उतारने के लिए व्यक्ति को उदार, परोपकारी और पुरुषार्थी होना ही होगा और स्वार्थ का त्याग करना ही होगा। स्वार्थ, अकर्मण्यता और अनुदारता का त्याग करने पर ही व्यक्ति व्यावहारिक जीवन में सफल हो सकता है। मनु महर्षि ने जो धर्म के १० लक्षण बताए हैं, वे सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व का निर्माण करने वाले हैं और स्वभावतः ये ही परलोक में सिद्धि प्राप्त कराने वाले हैं। परलोक की सिद्धि क्या है? परमात्मा के आनन्द की प्राप्ति या मोक्ष की प्राप्ति। मोक्ष का अर्थ है छूटना और छूटना किससे? दुःखों से छूटना। सांसारिक सिद्धि क्या है? समस्त धनैश्वर्यों के साथ यश और बल की प्राप्ति करना। सांसारिक धन ऐश्वर्य परलोक की सिद्धि में तभी बाधक होते हैं जब वे अधर्मपूर्वक संग्रह किये जाएँ। धर्मपूर्वक पदार्थों का संग्रह करने और उनका त्याग भाव से भोग करने से वे हमारे मोक्ष के उद्देश्य में बाधक नहीं अपितु सहायक होते हैं। जो धर्मपूर्वक संग्रह नहीं करते उनका धन ऐश्वर्य उनको अधिक समय तक सुख नहीं दे सकता। वे वास्तव में अपनी पहले से जमा की हुई पूंजी को खर्च कर रहे हैं और आगे के लिए कुछ संग्रह नहीं कर रहे। त्याग भाव से भोग करने वाला ही संसार का उपकार कर सकता है, वहीं सत्यवादी और सत्यकारी हो सकता है। वही अपने व्यवहार और व्यवसाय में निष्कपट और निष्कलंक हो सकता है। वही आत्मिक दृष्टि से उन्नत हो सकता है। वह संसार की बाधाओं का निरपेक्ष भाव से सामना कर सकता है और उन पर विजय प्राप्त कर सकता है। वही पुरुषार्थी हो सकता है क्योंकि वह ईश्वर की आज्ञानुसार कार्य करता है और वह जानता है कि सफलता आज मिले या कल, उस का कोई भी कर्म निष्फल नहीं होता है।

इसलिए ईश्वर को मानने वालों को यह निश्चयपूर्वक विचार करके धारण कर लेना चाहिए कि धर्म का पालन केवल परलोक के लिए ही नहीं है अपितु इस जीवन में सफलता व शांति प्राप्त करने का भी वही उपाय है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य को धार्मिक अवश्य होना चाहिए।

आपकी सम्मतियाँ

आज भारत की दुर्दशा इन नकली भगवानों के कारण ही है। भक्त सोचते हैं कि बिना अर्थ समझे औश्र बिना पुरुषार्थ किये, नाम जपने से सारी समस्याओं का अंत हो जाएगा। परतु एक बात ध्यान देने योग्य है कि सब एक बार तो यह वाक्य कह देते ही हैं, मुझे तो कुछ अंतर नहीं दिखता। ऐसे वक्त पर शांतिधर्मी का भगवान और भक्ति पर विशेष शृंखला चलाना सराहनीय प्रयास है।

सच ही तो है कि सर्वव्यापक को एकदेशी मानना भगवान की निंदा ही है। नरेंद्र आहुजा जी ने विचारने पर मजबूर कर दिया कि जीवन-यात्रा का हमारा आखिरी गंतव्य क्या है और तो बस बीच के कांटे हैं। हमें लक्ष्य पर ध्यान रखना चाहिए। शांतिधर्मी वास्तव में अद्वितीय पत्रिका है। इसमें स्वामी दयानन्द जी के अनुसार सत्य का मंडन और असत्य का खंडन बिना किसी की निंदा के होता है।

प्रतीक कुमार सोनी,
ग्राम पोस्ट बिठमड़ा, जिला हिसार

जून अंक अत्यंत प्रभावी और सारगर्भित है। राज कुकरेजा का लेख नारी जाति को एक नई ज्योति व प्रेरणा देने वाला है। आज नारी की दुर्दशा के कारणों और उसको दूर करने के उपायों पर लेख मे सार्थक प्रकाश डाला गया है। नारी जागरण के आजकल के अभियानों में प्राय: नारी जाति को पु.ष समाज के विरुद्ध भड़का कर अपना राजनैति उल्ल्म सीधा किया जाता है। इस द्ष्ि से लेखिका का उद्‌बोधन सकारात्मक है। वे अधिकारों के साथ कर्त्तवयों की बात भी करती हैं और नारी को अपने स्वरूप की पहचान करने की प्रेरणा देती हैं। निश्चय ही इस लेख ने हजारों बहनों को प्रेरणा दी होगी। रामफल सिंह आर्य जी कविता अत्यंत प्रेरक और मार्मिक है।

निश्चल यादव
पो0 डहीना, जिला रेवाड़ी-123401

जून अंक में डॉ0 विवेक आर्य का लेख 'वीर मराठों का विजय अभियान' रोचक, ज्ञानवर्द्धक और हृदय स्पर्शी है। भारतीय पौरुष के इतिहास की गहराईयों में दबे पड़े तथ्यों को प्रकाश में लाकर डॉ0 विवेक जी ने प्रशंसनीय कार्य किया है। हमारे इतिहास के आदर्श पक्षपातपूर्ण राजनैतिक इतिहास लेखन ने विलुप्त से कर दिये हैं, ऐसे में शांतिधर्मी राजेशार्य व विवेक जी के लेखों राष्ट्रीय स्वाभिमान के जागरण का महान कार्य कर रहा है। लेखक और सज़ादक बधाई के पात्र हैं।

सोमेन्द्र प्रताप आर्य
ग्रा0 पो0 नीमराणा, जिला अलवर राजस्थान

हर बार की तरह शांतिधर्मी विविधतापूर्ण सामग्री से सुसज्जित है। बाल वाटिका के अतिरिक्त मुझे यज्ञदत्त आर्य द्वारा प्रस्तुत कहानी प्रेम का वास बहुत पसन्द आई। भजनावली में प्रकाशचन्द्र कविरत्न के भजन अत्यंत प्रेरक हैं। मुंशी प्रेमचन्द की कहानी और प्रेरक प्रसंग शांतिधर्मी की गुणवत्ता में चार चाँद लगाते हैं।

मनीष सोनी
द्वारा युनाइटिड मेडिकल एजेंसी
बस स्टैण्ड, कोटपूतली

शांतिप्रवाह भक्ति का उद्‌देश्य और अन्तत: दुनिया मान रही संस्कृत का महत्त्व पढ़कर हम निश्चय से कह सकते हैं कि शांतिधर्मी भारतीय जीवनमूल्यों का प्रचार करने वाली पत्रिका है।

सत्यप्रकाश भादू
झुंपा (बहल) जिला भिवानी

नरवाना में वेदप्रचार सप्ताह

प्रति वर्ष की भाँति आर्यसमाज नरवाना की ओर से भव्य वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन ५ अगस्त से ११ अगस्त २०१३ तक किया जा रहा है। इस अवसर पर प्रख्यात वैदिक विद्वान् आचार्य वेदप्रकाश जी श्रोत्रिय, दिल्ली, भजनोपदेशक नरेशदत्त आर्य बिजनौर पधार रहे हैं। इस अवसर पर चतुर्वेद पारायण महायज्ञ का आयोजन भी किया जाएगा जिसमें कन्या गुरुकुल हाथरस की छात्राओं द्वारा वेद पाठ किया जाएगा। कृपया अधिक से अधिक संख्या में पधारकर धर्मलाभ उठावें।

विजय कुमार आर्य
मंत्री, आर्यसमाज नरवाना, जिला जींद

ईश्वर विश्वासी को भय किसका!

❑**नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'** ५०२ जी एच २७, सैक्टर २० पंचकूला

भय को जीवन से दूर करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि भय से पैदा हुई कुप्रवृतियाँ पुरुषार्थ को खा जाती हैं। भय पतन और पाप का निश्चित कारण है।

अज्ञानता के कारण उत्पन्न हुई चित्त की वह भयानक वृति जो मनुष्य को पतन की ओर ले जाती है- भय कहलाती है। भय की उत्पत्ति का मूल कारण अल्पज्ञता, अज्ञानता और उससे उत्पन्न अंधविश्वास है। वेदमाता मनुष्य को भय भगाने का सुंदर संदेश देते हुए कहती है- 'मा भेर्मा संविक्था उर्जं धत्स्व।। (यजु० ६/३५) मत डर, मत कांप! बल, पराक्रम और साहस धारण कर!!

किसी भी बीमारी के इलाज के लिए उसके मूल कारण को ढूंढ कर उसका निदान करना पड़ता है। ठीक इसी प्रकार इस भय के भूत को भगाने के लिए उसके मूल कारण अर्थात् अज्ञानता को दूर करना आवश्यक है।

मनुष्य के जीवन में सबसे बड़ा भय मृत्यु का होता है। **मृत्युरीशे** अर्थात् मृत्यु तो हम सब पर शासन करती है। यह एक अटल सत्य है जिसका भी जन्म हुआ उसकी मृत्यु अवश्य होती है। फिर इस ईश्वरीय व्यवस्था से हम इतना भयभीत क्यों रहते हैं? यदि गहराई से चिंतन करें तो इसका एकमात्र कारण मृत्यु के विषय में हमारी अज्ञानता है। हमारी आत्मा तो अजर अमर अविनाशी है। यजुर्वेद में आत्मा की अमरता की स्पष्ट संदेश है- वायुरनिलममृतमथेदम्। (४०/१५) अर्थात् आत्मा अभौतिक और अमर है। इसी तथ्य को योगेश्वर कृष्ण ने विषाद में फंसे अर्जुन को कर्तव्य कर्म के निर्वहन की प्रेरणा देते हुए कहा था-

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भवति वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

आत्मा की अमरता के रहस्य को ज्ञान होने के बाद मनुष्य को मृत्यु का भय नहीं रहता। जिसे आत्मबोध हो गया वह मृत्यु से क्यों डरेगा! वीर हकीकत राय, महर्षि दयानंद सरीखे ऐसे कितने वीर धीर आत्मज्ञानी हुए जिन्होंने अंतिम समय में हंस कर मृत्यु की देवी का स्वागत किया।

मृत्यु के अतिरिक्त मनुष्य को जीवन में अपनी भौतिक संपत्ति खोने का भय भी बहुत सताता है। इसका एकमात्र कारण भी अज्ञानता है। हमारे पास जो कुछ भी है वह सब उस सुख स्वरूप सबका पालन करने वाले परमपिता परमेश्वर का दिया हुआ ही तो है। अब यदि किसी अन्य की दी हुई वस्तु को हम अपना मानकर खुद को उसका स्वामी समझने लगें तो उसके चले जाने पर मोह ममता के कारण एक स्वाभाविक भय दुःख तो उत्पन्न होता है।

अब यदि हम अपनी समस्त सुख सामग्री धन ऐश्वर्य को ईश्वर प्रदत्त जानकर उसका नित्य प्रति धन्यवाद करते हुए-

तेन त्यक्तेन भुंजीथा।

त्यागपूर्वक उपभोग के भाव से प्रयोग करेंगे तो उसके खो जाने या चले जाने का भय हमें नहीं सतायेगा। ज्ञान के प्रकाश से अपने जीवन को आलोकित करते हुए अज्ञानता के अन्धकार को दूर कर भय संशय को दूर कर सकते हैं।

भय को जीवन से दूर करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि भय से पैदा हुई कुप्रवृतियाँ पुरुषार्थ को खा जाती हैं। भय पतन और पाप का निश्चित कारण है। भय से बुराईयाँ उत्पन्न होती हैं, दुःख आते हैं और मृत्यु आती है। समाज में मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है कि वह अज्ञानता और अविश्वास के कारण सदा एक दूसरे से भयभीत रहता है।

अपने जीवन में भयमुक्त होने का एक सबसे सरल उपाय है- ईश्वर के सत्य स्वरूप को जानकर उसकी शरण में अपना सर्वस्व समर्पित करना। एक बार यदि हम अपने को सर्वशक्तिमान, निर्भय ईश्वर की शरण में सौंप देते हैं तो निश्चित रूप से हर प्रकार के भय से मुक्त हो जाते हैं। उपनिषदों में स्पष्ट संदेश दिया है-

अभयं वै ब्रह्माभयं हि वै ब्रह्म भवति य एवं वेद।

निश्चय ही ब्रह्म निर्भय है जो उस ब्रह्म को जान लेता है वह ब्रह्म के समान निर्भय अर्थात् भयमुक्त हो जाता है।

वायु के घोड़े पर सवार

❑पं० चमूपति जी

पवस्व देव आयुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः।
वायुमारोह धर्मणा।।७।।

ऋषिः–निध्रुविः = निश्चित ध्रुव।

(देवः) तू दिव्य रस है। (आयुषक्) निरन्तर (पवस्व) प्रवाहित हो। (ते) तेरा (मदः) आह्लाद (इन्द्रम्) इन्द्रियों के राजा को (गच्छतु) प्राप्त हो। (धर्मणा) धर्म के द्वारा (वायुम्) वायु पर (आरोह) सवार हो जा।

ईश्वर की कृपा का अनुभव एक ऐसा अमृत है जिसकी उपमा किसी सांसारिक रस से नहीं हो सकती। वह अनुभूति अलौकिक है। प्रभु की महिमा का दर्शन ही तो वास्तविक दर्शन है। जब एक बार यह रस नस-नस, नाड़ी-नाड़ी में बह निकला, फिर तो इसका प्रवाह रुकने का नहीं। कोई कार्य करता रहूँ, यह न रुकने वाला स्रोत बहता ही जाता है। मेरे साधारण जीवन को इसने अपने रंग में रंग लिया है। मेरा खाना, पीना, खेलना, कूदना, उठना, बैठना-सब उपासना-रूप हो गया है। एक मस्ती है कि हमेशा सिर पर सवार रहती है। हाथ काम करते जाते हैं, हृदय जाप करता रहता है। बिना प्रयत्न के अपने आप प्रभु का चिन्तन होता जा रहा है। मैं खाता इसलिए हूँ कि प्रभु के काम के लिए यह शरीर बना रहे। ऐसा खाना प्रभु की पूजा नहीं तो और क्या है। इस प्रकार मेरा सारा क्रिया-कलाप प्रभु के अर्पण है।

यह नशा मेरे प्राणों पर सवार हो गया है। मेरे देह का धर्म बन गया है। आत्मा के स्वभाव में आ गया है। अब मैं सोऊँ, जागूँ, उठूँ, बैठूँ, मेरा हृदय झूमता ही रहता है।

प्रभु के प्रेम के दीवाने! यह तेरा धर्म है कि अब तू हवा के घोड़े पर चढ़ जाय। जो नशा तेरे आत्मा में है, तेरी इन्द्रियों में, तेरे प्राणों में है, उसे तू अपने तक परिमित कैसे रखेगा? तू धर्म-यात्रा कर। आत्माह्लाद का औरों के हृदयों में संचार कर। अपनी मस्ती का मस्ताना सारे संसार को बना। हवा के झोंके तेरी मस्तानी रागिनी से झूठ उठें। गा! गा! मस्ताने गायक! गा! आकाश-पाताल को अपने गीत से गानमय कर दे।

चाणक्य-नीति

चतुर्थोऽध्यायः (गतांक से आगे)

कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययागमौ।
कश्चाहं का च मे भक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः।।१८

कैसा समय है, कौन मित्र हैं, कौन सा देश या स्थान है, व्यय और आय के साधन क्या हैं, मैं कौन हूँ और मेरी भक्ति कैसी है यह बार बार विचार करते रहना चाहिए। (मनुष्य को समय का महत्त्व समझना चाहिए, समय को व्यर्थ नहीं खोना चाहिए। मित्रों की पहचान करके अच्छे मित्रों का ही संग करना चाहिए। जिस देश में रह रहा है, उसके नियमों का पालन करना चाहिए। आय को देखकर ही व्यय करना चाहिए। मैं कौन हूँ ऐसा विचार करके मनुष्य को आध्यात्मिक होना चाहिए और अपनी आत्मिक उन्नति के लिए परमात्मा की भक्ति उपासना में क्या प्रगति हुई है, ऐसा चिन्तन मनन निरन्तर करते रहना चाहिए।)

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः।।१९

जन्म देने वाला, उपनयन संस्कार कराने वाला, विद्या देने वाला, अन्न देने वाला और भय से रक्षा करने वाला- ये पांच प्रकार के पिता होते हैं।

राजपत्नी गुरोः पत्नी मित्रपत्नी तथैव च।
पत्नी माता स्वमाता च पञ्चैताः मातरः स्मृताः।।२०

राजा की पत्नी, गुरु की पत्नी, मित्र की पत्नी, पत्नी की माता (सास) और अपनी जन्मदात्री; ये पांच प्रकार की माताएँ होती हैं।

अग्निर्देवो द्विजातीनां मुनिनां हृदि दैवतम्।
प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनः।।२१।।

अग्नि (भौतिक अग्नि व प्रकाशस्वरूप परमेश्वर) द्विजों का देवता होता है। अर्थात् वे परमेश्वर की उपासना से आत्मज्ञान की उन्नति करते हैं और भौतिक अग्नि की सहायता से विज्ञान की उन्नति करते हैं। मननशील तपस्वियों के हृदय में देवत्त्व होता है, अल्प बुद्धि वाले व्यक्ति प्रतिमा आदि को देवता समझते हैं और समदर्शी सर्वत्र देवताओं का विचार रखते हैं।

अमृत वचनावली

प्रीतिशतकम्

❑डॉ० रामभक्त लांगायन आई ए एस (सेवानिवृत्त)

अहो विचित्रता दृष्टेर्बहिरन्तश्च दर्शनम्।
अपरं बाह्य सौन्दर्यं परमान्तरिकं मतम्।।६४।।

सब आंखों का खेल है। जिसके पास बाहर देखने की क्षमता है वह परम सौन्दर्य को देख सकता है और जिसकी भीतर देखने की क्षमता है वह भीतर का परम सौन्दर्य देख सकता है।

सच्चिदानन्दसन्दोहरसास्वाद प्रदायिनी।
परमानन्दमदिरा, किं वा मदिरयान्यया।।६५।।

शराब छोटी शराब है और परमात्मा की भक्ति विराट् शराब है। शराब को पीने से थोड़ी देर के लिए अहंकार नष्ट होता है लेकिन जो समर्पण की शराब पी लेता है उसका अहंकार सदा सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

उत्साहश्च विवेकश्च जीवनोत्कर्षदावुभौ।
विवेकप्रेरितोत्साहो विवेकांकुशगश्च स्यात्।।६६।।

उत्साह और विवेक दोनों जीवन में जरूरी हैं। उत्साह बिना विवेक मन्दगति है और बिना विवेक उत्साह कुछ नहीं है। इसलिए उत्साह विवेक को प्रेरणा दे और विवेक उत्साह को अंकुश में रखे।

देयमन्नादिकं ग्राह्यं हरेर्नाम किमन्यतः।
अहंकारो विनाशाय चोद्धाराय विनम्रता।।६७।।

इस दुनिया में यदि कोई लेने की वस्तु है तो वह प्रभु का नाम है और अन्नादि से बढ़कर कोई दान नहीं है। उद्धार के लिए विनम्रता का मार्ग है और डूबने के लिए अहंकार काफी है।

विश्व-चिन्तन

आधुनिक युग में वेदों की उपयोगिता

❐**रामफल सिंह आर्य,** ८७/एस-३, बी एस एल कालोनी सुन्दरनगर, जिला मण्डी (हि० प्र०)

जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं जिसके लिये वेद में सुन्दर उपदेश न हो। सामान्य व्यवहार से लेकर उच्च से उच्चतम् कोटि के विज्ञान तक, व्यक्तिगत स्तर पर अपने घर की व्यवस्था से लेकर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक, तृण से लेकर ब्रह्म तक जितने ज्ञान विज्ञान की आवश्यकता मनुष्य को है और आगे रहेगी, उस सबका मूल वेद में विद्यमान है।

इस पृथ्वी पर जितने भी प्राणी हैं उनके लिये जिस वस्तु की अत्यन्त आवश्यकता है, वह है ज्ञान। जीवन को चलाने के लियें यूं तो हम कह सकते हैं कि स्वस्थ शरीर की आवश्यकता है-- फिर भोजन की आवश्यकता है, श्वास लेने के लिये वायु की आवश्यकता है। निःसन्देह इन सब वस्तुओं की अनिवार्यता है परन्तु ज्ञान के बिना सब गौण हैं। ज्ञान होगा तभी प्राणी अपनी आवश्यकतानुसार भोजनादि अन्य साधन भी जुटायेगा और अपनी रक्षा के साधन भी उत्पन्न करेगा। क्षुद्र से क्षुद्र जीव में भी अपने अनुकूल भोजन, आश्रय एवं रक्षा हेतु साधन जुटाने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है। यह बिना ज्ञान के सम्भव नहीं।

संसार पर गहन दृष्टि डालने से दो प्रकार का ज्ञान देखने में आता है एक- पशु पक्षियों आदि का स्वाभाविक ज्ञान और दूसरा- मनुष्यों का नैमित्तिक ज्ञान। स्वाभाविक ज्ञान जितना भी ईश्वर द्वारा प्रदत्त है उसमें थोड़ा बहुत बढ़ाना सम्भव हो सकता है; वह भी केवल मनुष्य की सहायता से; परन्तु नैमित्तिक ज्ञान ऐसा है जिसे बहुत उच्च स्तर तक बढ़ाया भी जा सकता है और घटाया भी जा सकता है। नैमित्तिक का अर्थ है कि जो किसी के होने से हो जाये और न होने से न हो अर्थात् यह सापेक्ष है।

जो लोग ज्ञान का उदय भी विकासवाद की विचारधारा से मानते हैं उनके पास इस बात का कोई उत्तर नहीं है कि क्रमिक विकास से यदि ज्ञान भी प्राप्त होता है तो फिर मनुष्य का वह बच्चा जिसे उत्पन्न होते ही जंगल में छोड़ दिया जाये, सभ्य क्यों नहीं बन पाता? जो जंगली जातियां आज भी वनवासी जीवन जी रही हैं उनमें क्रमिक विकास से ज्ञान का उदय क्यों नहीं होता? इसी से विकासवाद का खोखलापन प्रकट हो जाता है।

यहाँ पर हमारा विषय विकासवाद की समीक्षा करना नहीं वरन् यह विचार करना है कि वेद (ज्ञान) की क्या आज भी उपयोगिता है? चौंकिये मत! यह प्रश्न न तो नया है और न ही प्रथम। ऐसे प्रश्न पहले भी बहुत उठते रहे हैं जिनका समय-समय पर उत्तर भी दिया जाता रहा है। यह प्रश्न इसलिये भी अधिक उठता है कि लोग वेद से अनभिज्ञ हैं। अधिकतर लोग आज भी यह समझते हैं कि वेद संस्कृत में लिखी प्राचीन पुस्तकें हैं जिनमें उस समय के लोगों ने कुछ लिखा होगा और उसे आज के परिप्रेक्ष्य में लोग उपयोगी नहीं समझते। परन्तु यह प्रश्न करना कि वेदों की आधुनिक युग में भी कोई उपयोगिता है या नहीं, ऐसा ही है जैसे कोई कहे कि क्या आज सूर्य की आवश्यकता है? क्योंकि प्रकाश के अन्य साधन भी उपस्थित हैं। आप ऐसे व्यक्ति को क्या कहेंगे जो एक विद्युत बल्ब अथवा ट्यूब को देखकर सूर्य की उपयोगिता पर प्रश्न करे! अथवा कोई यह कहे कि मुख से भोजन करते हुए अथवा बोलते हुए बहुत समय हो गया है, क्यों न अब इसके स्थान पर नाक से भोजन किया जाये या कानों से बोला जाये! यह व्यक्ति भी उसी श्रेणी में आयेगा जिसमें सूर्य की उपयोगिता पर प्रश्न करने वाला था।

हमने प्रारम्भ में ही ज्ञान की बात इसलिये की, कि इसके बिना मनुष्य की श्रेष्ठता या उपयोगिता एकदम निरर्थक है। ज्ञान की आवश्यकता मनुष्य को जितनी सृष्टि के आरम्भ में थी, उतनी ही आज है और उतनी ही आज से लाखों करोड़ों वर्ष के उपरान्त रहेगी। हां, इतना अवश्य है कि मनुष्य का ज्ञान परिवर्तनशील है। वह इसलिये कि समय-२ पर उसकी मान्यतायें या प्राथमिकतायें बदलती रहती हैं और वह अपने लिये नये-२ विधान बनाता है क्योंकि सामान्यतया उसका ज्ञान निर्भ्रान्त नहीं होता। निर्भ्रान्त ज्ञान की स्थिति योग की उच्च भूमि में तो संभव है, जो मन्त्रद्रष्टा ऋषियों को प्राप्त होती है परन्तु सामान्य मनुष्य में यह संभव नहीं हैं। अतः मनुष्य जो स्वभाव से निरा पशु है,

यदि उसे ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में ही परम दयालु जगदीश्वर द्वारा न दिया जाता तो उसमें ज्ञान का कभी उदय न होता। अतः उसे उसकी उत्पत्ति के साथ ही दाता द्वारा ज्ञान भी दिया गया और वह भी पूर्ण, निर्भ्रान्त एवं अपरिवर्तनशील।

वेद के अर्थ ही विदलृ लाभे, विद् विचारणे, विद् विज्ञाने आदि कोष में दिये गये हैं। अर्थात् जो अर्जित किया जाये, जिसमें विचार शक्ति हो और जो ज्ञान विज्ञान से पूर्ण हो। स्वयं वेद में आया है-

देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति (अथर्व १०/८/३२)

अर्थात् उस ईश्वर का काव्य, ज्ञान=वेद न तो कभी जीर्ण होता है और न कभी मरता या नष्ट होता है। ईश्वर क्योंकि पूर्ण है। अतः उसका ज्ञान भी पूर्ण है

ओम् अग्निमीळे पुरोहितम् यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम्।। (ऋ० १/१/१)

अर्थात् पहले से जगत् को धारण करने वाले, यज्ञ के प्रकाशक, प्रत्येक ऋतु में पूजनीय, सुन्दर पदार्थों के देनेहारे, रमणीय रत्नादिकों के पोषण करने वाले प्रकाशस्वरूप ज्ञानमय परमेश्वर की मैं स्तुति करता हूँ।

मनुष्य की उत्पत्ति के साथ ही चार पवित्रात्मा ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य अंगिरा के माध्यम से चार वेद भी मानव मात्र के कल्याणार्थ प्रकाशित हुए। इसलिये प्रकाशित हुए कि यह ईश्वर की स्वाभाविक क्रिया है।

स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च (श्वेताश्वतरोप० ७/८)

जैसे सृष्टि को उत्पन्न करना उसका स्वभाव है वैसे ही ज्ञान का प्रकाश करना भी उसका स्वभाव है। यदि वह मनुष्यादि प्राणियों को तो उत्पन्न करता परन्तु ज्ञान का प्रकाश न करता तो फिर इस सारे संसार की क्या दशा होती यह कल्पना से भी परे की बात है। वेदों के अन्दर उस प्रभु ने सब आवश्यक विद्यायें प्रकाशित कर के मनुष्यों के कल्याणार्थ प्रदान की हैं। परन्तु ये विद्यायें बीज रूप में, सूत्र रूप में है। क्यों? क्योंकि उसने मनुष्य को क्रियावान, बनाया है, कर्मशील बनाया है। वह स्वयं भी कर्मशील है उसका नाम ही शतक्रतु है अर्थात् सदैव बहुत प्रकार के कर्म करने वाला है। **त्वं हि न पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ** (ऋ० ८/६८/११) अतः वह चाहता है कि उसकी सन्तानें भी, उसके पुत्र भी कर्मशील बनें, पुरुषार्थी बनें; अतः बीजरूप में सब कुछ प्रदान किया। अर्थात् मार्ग तो मैंने बता दिया है परन्तु चलना आपको है। सब कुछ बैठे बिठाये नहीं मिलेगा। दूसरा कारण यह भी है कि वह जीवों का, आत्माओं का स्वाभिमान भी सुरक्षित करना चाहता है। मनुष्य उसी पर स्वाभिमान करता है जिसे स्वयं कमाता है। माता पिता की सम्पत्ति जो उसे सहज ही में प्राप्त हो जाती है, वह विलास का तो कारण बन सकती है परन्तु स्वाभिमान का विषय नहीं हो सकती। स्वाभिमान जो बहुत ऊंची वस्तु है वह अपनी अर्जित वस्तु पर ही प्राप्त होता है अतः यह भी ईश्वर की महान् दया है कि जो हम मनुष्यों को ज्ञान का सूत्र देकर पुरुषार्थी बनाया और जैसे ही हमने पुरुषार्थ प्रारम्भ किया उसने अपना कोष हमारे समक्ष खोल दिया।

जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं जिसके लिये वेद में सुन्दर उपदेश न हो। सामान्य व्यवहार से लेकर उच्च से उच्चतम् कोटि के विज्ञान तक, व्यक्तिगत स्तर पर अपने घर की व्यवस्था से लेकर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक, तृण से लेकर ब्रह्म तक जितने ज्ञान विज्ञान की आवश्यकता मनुष्य को है और आगे रहेगी, उस सबका मूल वेद में विद्यमान है। वेद की इसी व्यापकता को देखकर महर्षि मनु ने उदघोष किया था- **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।।** (२/६) अर्थात् वेद ही सभी कर्तव्यों का मूल है तथा **धर्मजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः। (२/१३)** अर्थात् जो कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य को जानना चाहे उसके लिये वेद ही परम प्रमाण हैं। महर्षि व्यासजी से जब उनका परिचय पूछा गया तो उन्होंने कहा-

वेदो मे परमं चक्षुर्वेदा मे परमं बलम्।
वेदा मे परमं धाम वेदा मे ब्रह्म चोत्तरम्!!

(महा० शांतिपर्व १६३/१७६)

वेद ही मेरे उत्तम नेत्र हैं, वेद ही मेरे परम बल हैं वेद ही मेरे परम आश्रय हैं तथा वेद ही मेरे सर्वोत्तम उपास्यदेव हैं। आईये! इस संक्षिप्त भूमिका के उपरान्त वेद के उन कतिपय स्थलों पर दृष्टिपात करें जिनके आधार पर वे सार्वदेशिक, सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं।

मानव को एक सूत्र में बांधने का उपदेश-

मनुर्भव जनया दैवं जनम्।। (ऋ० १०/५३/६)

तुम मनुष्य बनो और श्रेष्ठ सन्तानों को जन्म दो जिससे सदा सर्वत्र सुख की वृद्धि हो।

संगच्छध्वं सं वदध्वम् सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे सं जानाना उपासते।।

(ऋ० १०/१९१/२)

तुम सब लोग मिल कर चलो, मिलकर एक स्वर में बोलो, मिलकर विचार करो, जिससे कि तुम पूर्वजों की भांति सुख समृद्धि को प्राप्त करो।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वारमुत स्वसा।।

(अथर्व० ३/३०/३)

भाई-भाई से द्वेष न करे और बहन-बहन से द्वेष न करे तथा भाई-बहन आपस में द्वेष न करें।

यत्र विश्वं भवत्येक नीड़म्।। (यजु० ३२/८)

सारा संसार एक घोंसले के समान है जिसमें सब लोग मिल जुलकर रहें।

शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः (ऋ० १०/३५/६)

संसार के लोगो सुनो! तुम उसी एक अमृतरूप ईश्वर के पुत्र हो।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठासो एते सम्भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।। (ऋ० ५/६०/५) हे संसार के लोगो! न तो तुम में कोई बड़ा है और न कोई छोटा। तुम सब भाई-२ हो। सौभाग्य की प्राप्ति के लिये आगे बढ़ो।

सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।

(अथर्व० ३/३०/१)

हे मनुष्यो! मैं तुम्हारे लिये एकहृदयता, एकमनता और निर्वैरता करता हूँ। तुम एक दूसरे को सभी प्रकार से प्रीति से चाहो, जैसे न मारने योग्य गौ उत्पन्न हुए बछड़े को प्यार करती है।

सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।। (अथर्व० १९/१५/६)
सब दिशायें, सब दिशाओं के प्राणी मेरे मित्र बन जायें।

विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् (ऋ० ४/१/४)

हम सब द्वेषों को पूरी तरह से छोड़ दें।

स नः पप्रिः पारयन्ति स्वस्ति नावा पुरूहुतः।
इन्द्रो विश्वा अति द्विषः।। (ऋ० ८/१६/११)

वह बहुतों द्वारा पुकारा गया परमेश्वर, जो सब कुछ पूर्ण करने वाला है, वह अपनी कृपा से हमें सदा द्वेषों से हटा कर, पार करके हमारा कल्याण करे।

अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम्।
येन विश्वा परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु।।

(ऋ० ६/५१/१६)

हम सुखपूर्वक ले जाने वाले निर्दोष मार्ग का ही अनुसरण करें, जिससे मनुष्य सम्पूर्ण द्वेषभावों को त्याग कर श्रेष्ठ धन को प्राप्त करे।

समानो मन्त्रः समितिः समानि समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि।।

(ऋ० १०/१९१/३)

तुम्हारा विचार एक हो, समिति एक हो। तुम लोगों का मन के साथ चित भी एक हो। मैं तुमको एक समान वेदोपदेश देता हूँ और तुमको एक जैसी भोज्यसामग्री देता हूँ।

उपर्युक्त मन्त्रों में जो बातें कही गई हैं उनसे बढ़कर भला विश्व को एक करने का और क्या साधन हो सकता है? क्या इन उपदेशों को समय की सीमाओं में बांधा जा सकता है? कदापि नहीं। यदि कभी विश्व में शान्ति स्थापित होगी तो वह एकता से ही सम्भव हो सकेगी। इस उपदेश की जितनी आवश्यकता सर्गारम्भ में थी उतनी ही आज है, अपितु आज के विद्वेषपूर्ण वातावरण में तो और भी अधिक आवश्यकता है।

मानव समाज को सुखी बनाने के लिये जिस परम साधन की आवश्यकता है वह है शिक्षा, जिसके बिना कभी उन्नति की या उत्थान की कल्पना भी नहीं कर सकते। आईये! शिक्षा के विषय में वेदों का क्या मत है, देखें-

वेद में शिक्षा-सम्बन्धी सर्वोच्च आदर्श

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।।

(अथर्व० ११/५/३)

अर्थात् आचार्य, शिक्षक, ब्रह्मचारी, विद्यार्थी का उपनयन करके उसे अपने गर्भ में धारण करे अर्थात् पूर्ण रूपेण अपने आश्रय में रखे। यह उपदेश इतना मार्मिक है कि जिसको यदि हमारे शिक्षक समझ जायें तो उसी दिन एक क्रातिकारी परिर्वतन समाज में हो जायेगा। आचार्य छात्र की रक्षा ठीक उसी प्रकार से करे जैसे एक माता अपने उदर में पल रहे बालक की करती है। जैसे माता और बालक में कोई भेद, कोई परदा, कोई परायापन नहीं रहता अपितु उन दोनों का हृदय एक साथ धड़कता है और दोनों का सम्बन्ध अटूट बन जाता है; उसी प्रकार आचार्य और ब्रह्मचारी अर्थात् पढ़ाने वाले का और पढ़ने वाले का होना चाहिये। क्या राष्ट्र निर्माण का इससे सुन्दर उदाहरण पृथ्वी पर कोई अन्य भी हो सकता है? कदापि नहीं। जब आचार्य उसे अपने इतना सन्निकट कर लेता है जहाँ उन दोनों में कोई भेद रहता ही नहीं तो फिर क्या कभी विद्यालयों या महाविद्यालयों के प्रांगण हाय-२ या जिन्दाबाद/ मुर्दाबाद के नारों से गूंज सकते हैं? इनकी तो तब कल्पना भी नहीं हो सकती। क्या यह उपदेश, यह शिक्षा समय के ऊपर निर्भर है? यह तो तीनों कालों मे एक समान उपयोगी है। इस उपदेश की यह भी विशेषता है कि संसार की कोई भी शिक्षा नीति (वैदिक लोगों को छोड़ कर) इसकी घोषणा नहीं करती, न कर सकती है।

आचार्यो मृत्युः वरुण सोम ओषधयः पयः।

(अथर्व०११/३/१४)

यह ऋचा तो मानो साक्षात् अमृत की वह धारा है जिसको पाकर मनुष्य युग-२ तक अमर हो जाता है। व्यक्ति का, समाज का आमूल चूल परिवर्तन हो जाता है। आचार्य के गुणों का इसमें व्याख्यान किया है। पहले-२ जब आचार्य विद्यार्थी को अपनी शरण में लेता है तो विद्यार्थी (ब्रह्मचारी) को वह कठोर प्रतीत होता है। अब तक उसने घर में स्वच्छंद वातावरण में विचरण किया था अब वह घर से दूर

आचार्य के कुल में, गुरुकुल में प्रविष्ट हुआ है, यही उसका दूसरा जन्म है। वह आचार्य के यहाँ रहेगा तभी द्विज बन पायेगा। पहला जीवन मानो समाप्त है, नवजीवन का प्रारम्भ है। दूसरा जन्म तभी मिलेगा जब पहले मर चुकेगा। इसीलिये यहाँ आचार्य को सबसे पहले मृत्यु की संज्ञा दी गई है। पहले-२ घर से पहली बार बाहर गये ब्रह्मचारी को तो वह मृत्यु के समान ही दिखाई देगा। फिर उसे वरुण कहा गया है। यह शासक का रूप है जो सदैव उस पर कड़ी दृष्टि रखता है। उठते बैठते, सोते जागते सदैव अपने निरीक्षण में रखता है। आचार्य अब **मृत्यु** तो नहीं रहा, परन्तु अभी भी अच्छा नहीं लगता। वरुण रूपी शासक के पास रहते हुए ब्रह्मचारी भटक जाये या किसी दोषयुक्त आचरण को अपना ले, यह तो संभव ही नहीं हो सकता। फिर आचार्य का नाम होता है **सोम**। बस यहाँ से दोनों का सम्बन्ध मधुर बन जाता है। उसे आचार्य बहुत अच्छा लगने लगता है और वह उससे दूर नहीं रहना चाहता। उसके सानिध्य में वह प्रतिदिन निखरता जाता है। काम, क्रोध आदि आन्तरिक शत्रुओं पर निरन्तर विजय पाता चलता है और आचार्य उसे सदाचार की भट्टी में तपा कर कुन्दन बना देता है और राष्ट्र को अर्पित कर देता है। अन्त में आचार्य ब्रह्मचारी के लिए **पयः** अर्थात् दूध बन जाता है। अब उन दोनों की अवस्था ठीक वैसी ही हो जाती है जैसे गाय और बछड़े की होती है। न बछड़ा गाय के बिना रह पाता है और न गाय बछड़े के बिना। एक के पेट में प्यास है- दूसरे के स्तनों में दूध। एक पीने को आतुर है दूसरा पिलाने को। आचार्य ने अपना सारा ज्ञान अपने शिष्य पर उंडेल दिया, अपना सर्वस्व उस पर लुटा दिया। महर्षि दयानन्द को पढ़ाते समय जो आनन्द ब्रह्मर्षि गुरुवर विरजानन्द जी को आया होगा क्या उसका वर्णन किसी की लेखनी कर सकती है। वह अवर्णनीय है, अलौकिक है। लेकिन मृत्यु से लेकर पयः तक की यात्रा करते-२ दोनों कैसे स्वर्गिक आनंद में मग्न हो गये, कैसे अटूट बन्धन में बन्ध गये कि विदाई के समय दोनों की आंखों से आंसुओं की झड़ी लग गई। आज शिष्य आचार्य के एक संकेत पर अपना सर्वस्व बलिदान करने को तैयार है। बिना अपनी इच्छा बताये कोई चन्द्रगुप्त चाणक्य को सर्वस्व अर्पण कर देता है तो कोई देव दयानन्द स्वामी विरजानन्द को सब कुछ भेंट करके भीषण संघर्ष का जीवन अपना लेता है। यह वेद की उस ऋचा के उपदेश का चमत्कार है जो सारे मानव समाज की सब दूरियां मिटा कर उन्हे एक सूत्र में बांध देती है। क्या इस उच्च आदर्श को समय की कोई धारा बाधित कर सकती है? कदापि नहीं। काश! हमारे आज के विधिनिर्माता एवं शिक्षाविद् इस बात के मर्म को जान पाते।

रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि।
ऋतस्य स्वा देवहविः पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुषः।।
(यजु० ६/८)

हे अच्छे धन वाले सन्तानों! प्रजाजनों! तुम विद्या और अच्छी शिक्षा में रमो। हे वेदवाणी पालने वाले विद्वान्! आप सत्य न्याय व्यवहार से प्राप्त धन को स्वीकार कीजिये। (अब अध्यापक का उपदेश शिष्य के लिये है) हे राजन् वा प्रजापुरुष! सर्वशास्त्र का विचार करने वाला मैं अविद्या बन्धन से तुझे छुड़ाता हूँ। तू विद्या और अच्छी शिक्षाओं में धृष्ट हो।

अग्निसोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि।। (यजु० ६/९)

अग्नि और सोम के तेज और शान्ति गुणों में प्रीति करने वाले तुझ को उन्हीं गुणों से ब्रह्मचर्य के नियम पालने के लिये अभिषिक्त करता हूँ।

शुद्ध आचरण की शिक्षा-

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभि ते शुन्धामि। (यजु० ६/१४)

हे शिष्य, मैं विविध शिक्षाओं से तेरी वाणी को शुद्ध अर्थात् धर्मानुकूल करता हूँ, तेरे नेत्र को शुद्ध करता हूँ। अर्थात् तेरे शरीर के प्रत्येक अंग को मैं पवित्र करके तुझे कल्याण मार्ग पर ले जाऊँगा।

मनस्त आप्यायतां वाक्त आप्यायतां प्राणस्त आप्यायताम् ।।
(यजु० ६/१५)

हे शिष्य मेरी शिक्षा से तेरा मन, वाणी एवं प्राणादि सब गुणयुक्त एवं बलयुक्त बनें। अर्थात् शिक्षा केवल शाब्दिक न रह कर जीवन का अंग बन जाये।

अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा। ममेदिह श्रुतं हवम्।। (यजु० ७/९)

हे प्राण और उदान के समान वर्तमान, सत्य विज्ञान वर्द्धक योगविद्या के पढ़ने पढ़ाने वालो! यह योग का ऐश्वर्य सिद्ध किया हुआ है। उसमें तुम यहां योगविद्या से प्रसन्न होने वाले मेरी स्तुति को सुनो।

प्रतिदिन पढ़ाने की योग्यता का उपदेश-

विश्वे देवासऽआगत श्रृणुता मऽइमं हवम्। एदं बर्हिर्निषीदत। उपयामगृहीतोऽसि विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यऽएष ते योनिर्विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः।। (यजु० ७/३४)

भावार्थ :- विद्वान लोगों को उचित है कि प्रतिदिन विद्यार्थियों को पढ़ावें और परम विद्वान् पण्डित लोग उनकी परीक्षा भी प्रत्येक महीने में किया करें। उस परीक्षा से जो तीक्ष्ण बुद्धियुक्त परिश्रम करने वाले प्रतीत हों उनको अत्यन्त परिश्रम से पढ़ाया करें। **(सतत् आगामी अंक में)**

क्रांति की बलिवेदी पर-

सरदार अर्जुनसिंह : तीन पीढ़ियों की आहुति

❒राजेशार्य आट्टा ११६६, कच्चा किला, साढ़ौरा (यमुनानगर) हरि० १३३२०४

पिता स० किशन सिंह, माता विद्यावती व भगत सिंह

प्रिय पाठकवृन्द! हमारे क्रांतिकारी आन्दोलन के इतिहास में ऐसे बहुत से उदाहरण हैं, जब पूरे परिवार ने क्रांति में सक्रिय रूप से भाग लिया। तीनों चापेकर बन्धु (दामोदर, बालकृष्ण, वासुदेव) राष्ट्र के शत्रुओं का विनाश कर हँसते-हँसते कुर्बान हो गये। उनका बलिदानी खून रंग लाया और उससे प्रेरणा पाकर सावरकर बन्धुओं (गणेश, विनायक, नारायण) ने क्रांति यज्ञ की अग्नि को प्रदीप्त रखा। इसी परम्परा को आगे बढाते हुए शचीन्द्रनाथ सान्याल के बन्धु भी कूद पड़े। बनारस षडयंत्र केस में बन्दी बनाकर जब इन्हें आजीवन कारावास की सजा दी गई तो इनके दोनों भाई रवीन्द्रनाथ व यतीन्द्रनाथ भी गिरफ्तार कर लिये गये। सबसे छोटे भाई भूपेन्द्रनाथ लगभग ८ वर्ष के थे, अतः उन पर मुकदमा नहीं चलाया गया। पर बाद में (काकोरी काण्ड में) जब रामप्रसाद बिस्मिल आदि को फाँसी की सजा हुई और शचीन्द्रनाथ सान्याल को पुनः आजीवन कारावास की सजा देकर काला पानी भेजा गया तो भूपेन्द्रनाथ को भी इस केस में फँसाकर पाँच साल की कारावास की सजा दी गई।

मेवाड़ के इतिहास में बलिदानी वीरों की परम्परा में नाम आता है-झाला वीरों का। खानवा के युद्ध (१५२७ ई०) में मूर्च्छित महाराणा सांगा के छत्र-चंवर धारण कर झाला अज्जा ने वीरगति प्राप्त की। उनके उत्तराधिकारी सिहा ने गुजरात के बहादुरशाह से मेवाड़ की रक्षा करते हुए बलिदान दिया। उनके पुत्र आसा ने बनवीर से हुए युद्ध (१५४०ई०) में राणा उदयसिंह की प्राण-रक्षा करते हुए वीरगति पाई। आसा का पुत्र सुलतान झाला अकबर के विरुद्ध (१५६८ई०) जयमल-फत्ता के साथ युद्ध करते हुए काम आया। उनका पुत्र झाला मान (बीदा) हल्दी घाटी के मैदान (१५७६ ई०) में घायल महाराणा प्रताप के राजचिह्न धारण कर वीरता से लड़ता हुआ बलिदान देकर इतिहास में अमर हो गया। इनका पुत्र देदा राणा अमरसिंह के साथ जहाँगीर की सेना से लड़ता हुआ शहीद हो गया। देदा के उत्तराधिकारी झाला हरदास ने भी वंश परम्परा निभाते हुए शाहजहाँ से युद्ध के समय आत्मोत्सर्ग किया।

इतिहास की पुनरावृत्ति करते हुए राजस्थान की बलिदानी धरती के क्रान्तिकारी ठाकुर कृष्ण सिंह बारहठ ने महर्षि दयानन्द के देश-प्रेम से प्रभावित होकर उन्हें उदयपुर बुलाया और महाराणा सज्जनसिंह को उनका भक्त बनाया। इनके बेटे केसरीसिंह ने १९०३ ई० में दिल्ली दरबार में शामिल होने जा रहे उदयपुर नरेश राणा फतहसिंह के स्वाभिमान को जगाने के लिए "चेतावणी रा चूँगट्या" लिखकर भेजा था। वीर सावरकर के 'अभिनव भारत' से सम्बन्ध स्थापित कर इन्होंने १९११ ई० में अपने संगठन में बड़ी संख्या में नवयुवकों को भर्ती कर इन्हें प्रशिक्षण देने के लिए दिल्ली में मास्टर अमीरचन्द, अवधबिहारी तथा बालमुकुन्द के पास भेजा। इनमें केसरी सिंह के भाई जोरावरसिंह, पुत्र प्रताप सिंह व दामाद ईश्वरदान आसिया भी थे। मास्टर अमीरचन्द ने रास बिहारी बोस से इनका परिचय कराते हुए कहा था-

"भातरवर्ष में एकमात्र ठाकुर केसरीसिंह बारहठ ही ऐसे क्रांतिकारी देशभक्त हैं जिन्होंने केवल स्वयं को ही

स० अर्जुन सिंह, स० अजीत सिंह व स० स्वर्ण सिंह

नहीं, अपितु अपने भाई, पुत्र और जामाता को भी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के बलिदान-यज्ञ में आहुति के रूप में झोंक दिया है।"

शचीन्द्रनाथ सान्याल ने लिखा है-"नहीं मालूम, आज भारत में कितने ऐसे पिता हैं, जो सरदार केशरीसिंह जी की तरह सब जान-बूझकर अपने को और अपनी सन्तान को इस प्रकार देश के कार्य में बलि दे सकेंगे। भारत का दुर्भाग्य है कि प्रताप-सा युवक आज इस जगत् में नहीं है। बरेली जेल में अंग्रेजों का दण्ड भोगते-भोगते (२२ वर्ष की उम्र में, ७ मई १९१८ को) उसका नश्वर शरीर उस दिव्य आत्मा का साथ न निबाह सका।"

इन सब बलिदानियों के विषय में पाठक पहले पढ़ चुके हैं। आज हम एक और क्रांतिकारी के विषय में चर्चा करते हैं, जिसने अपने गुरु ऋषि दयानन्द की सभी मान्यताओं को शिरोधारण करके देशसेवा व्रती बन अपने तीन पीढ़ी तक के परिवार को क्रांति यज्ञ में आहुत कर दिया। वे थे इंकलाबी भगतसिंह के यशस्वी दादा सरदार अर्जुन सिंह, जिनके विषय में उनकी परपोती श्रीमती वीरेन्द्र सिन्धु ने लिखा है- "वे उन थोड़े से लोगों में से थे, जिन्हें ऋषि दयानन्द ने दीक्षा दी थी; यज्ञोपवीत अपने हाथ से पहनाया था। यह सरदार अर्जुनसिंह का सांस्कृतिक पुनर्जन्म था। मांस खाना उन्होंने छोड़ दिया। शराब की बोतल नाली में फेंक दी। हवनकुण्ड उनका साथी हो गया और सन्ध्या -प्रार्थना सहचरी। उनका जीवन पूरी तरह बदल गया था और यह बदल एक क्रान्तिकारी छलाँग थी--।"

अपने बेटों को भी इसी रंग में रंगने के लिए उन्होंने किशन सिंह और अजीतसिंह को साईदास एंग्लो-संस्कृत हाईस्कूल में (जालन्धर) शिक्षा प्राप्त करने भेजा। जीवन भर वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे, शास्त्रार्थ करते रहे और अपने स्वार्थ के लिए धूर्त अंग्रेजों द्वारा हिन्दू-सिक्खों के बीच चौड़ी की गई खाई को पाटने का प्रयास करते रहे। अपने बेटों को क्रांतिकारी बनाने के बाद अपने पोतों को भी उसी राह का पथिक बनाने का संकल्प लेते हुए उन्होंने अपने दोनों पोतों (जगतसिंह व भगतसिंह) को गोद में लेकर उनके यज्ञोपवीत संस्कार के समय संकल्प किया था कि मैं अपने दोनों वंशधरों को देश की बलिवेदी के लिए दान करता हूँ।

भगतसिंह ने जो देश-सेवा की, उसे पूरा भारत जानता है। जगतसिंह ११ वर्ष की अवस्था में अचानक चल बसे तो उस खाली स्थान को पूरा करने के लिए कुलतार सिंह आगे बढ़े। वे भी स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जेलों की तीर्थ यात्रा करते रहे। इस बलिदानी परम्परा के जनक सरदार अर्जुनसिंह का यह देश सदा ऋणी रहेगा (और साथ ही उन्हें क्रांतिकारी व राष्ट्रवादी विचारधारा की प्रेरणा देने वाले महर्षि दयानन्द का भी।) जिनका एक बेटा जेल की यातनाओं से शहीद हो गया; एक पोता फाँसी पाकर शहीद हो गया और दूसरे पोते भी जेल की यात्राएँ कर रहे हों, ऐसी विकट अवस्था में जीवन के अंतिम् वर्षों में उन पर लकवे का आक्रमण भी हो गया और जुलाई १९३२ को वे दिवंगत हो गये।

सरदार किशनसिंह महात्मा हंसराज और लाला लाजपत राय के साथ मिलकर समाज सेवा के कार्यों में जुटे रहते थे। आर्य अनाथालय लाहौर के भी वे वर्षों मंत्री रहे। राजनीति के क्षेत्र में लोकमान्य तिलक के व्यक्तित्व ने उन्हें बहुत प्रभावित व आकर्षित किया और वे क्रांतिकारी आन्दोलन में कूद पड़े। छोटे भाई सरदार अजीतसिंह तो बचपन से ही अंग्रेजों से घृणा करते थे। एक बार अपने ताऊ सुर्जनसिंह (अंग्रेज भक्त) के पास आये अंग्रेज क्लेक्टर को अजीतसिंह ने नमस्ते नहीं की तो इन्हें इसके लिए डांटा गया। इन्होंने निडरता से कहा-"जिन्हें ठीक-ठीक (हिन्दी) बोलना तक नहीं आता, उन्हें मैं नमस्ते क्यों करूँ?"

लाहौर के डी० ए० वी० कॉलेज में पढ़ते समय इन्होंने गोपाल कृष्ण गोखले का भाषण सुनकर कहा था-"ऐसे भाषणों से स्वतन्त्रता कभी नहीं मिल सकती है। इसके लिए

कठिन लड़ाइयाँ लड़नी पड़ेंगी।" इसी उद्देश्य के लिए दोनों भाई सूफी अम्बा प्रसाद, लाला हरदयाल आदि के साथ मिलकर क्रांतिकारी गतिविधियों में भाग लेने लगे। बाद में छोटे भाई सरदार स्वर्णसिंह भी क्रांति-पथ के पथिक बन गये। यह कहा जाता है कि उत्तर भारत में सूफी अम्बाप्रसाद इस आन्दोलन की आत्मा थे; लाला हरदयाल मस्तिष्क, सरदार अजीतसिंह हृदय और प्राण तथा सरदार किशनसिंह इसके भुजा थे। सूफी अम्बाप्रसाद के सहयोग से 'भारत माता सोसायटी' की स्थापना कर स्वतंत्रता के प्रति जनचेतना का कार्य होने लगा। इसके जलसो में अपने भाषणों से आग लगाना सरदार अजीतसिंह का काम था, उसे गाँव-गाँव में फैलाने लायक बनाना सरदार किशनसिंह का और सब ओर इसका प्रचार करना इनके भाई सरदार स्वर्णसिंह का। तीनों भाई इस क्रान्ति-यज्ञ के ब्रह्मा, विष्णु और महेश थे।

अंग्रेज सरकार की टेढी नजर इन सपूतों पर पड़नी स्वाभाविक थी। मई १९०७ में १८५७ की क्रांति के पचास वर्ष पूरे होने जा रहे थे। उस क्रांति को पुनः जगाने के प्रयास में लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह को बन्दी बनाकर माण्डले (बर्मा) जेल में भेज दिया गया। सरदार किशनसिंह तब नेपाल चले गये। २७ जुलाई १९०७ को स्वर्णसिंह को भी जेल में डाल दिया गया। लगभग २ मास बाद उन्हें जमानत मिली। इसी समय अजीतसिंह की संभावित मुक्ति का समाचार पहुँचा। अंग्रेज सरकार ने नेपाल नरेश पर दबाव डालकर किशनसिंह को भारत आने पर बाध्य किया और भारत आते ही बन्दी बना लिया। बाद में पचास हजार की जमानत पर छोड़ा गया। इसी क्रांतिकारी समय में भगतसिंह का जन्म हुआ। ११ नवम्बर को अजीतसिंह को माण्डले जेल से छोड़ा गया पर स्वर्णसिंह को बगावत का अपराधी सिद्ध कर डेढ़ वर्ष की सख्त कैद की सजा दी गई। जेल में ही उन्हें तपेदिक हो गया। बचने की सम्भावना न देखकर सरकार ने उन्हें छोड़ दिया। लगभग डेढ़ वर्ष तपेदिक से संघर्ष कर वे मात्र २३ वर्ष की अवस्था में (१९१० ई०) सदा के लिए सो गये।

माण्डले जेल से वापस आने पर अजीतसिंह पुनः क्रांतिकारी गतिविधियों में जुट गये। उन्होंने अनुभव किया कि निकट भविष्य में विश्व युद्ध होने वाला है। विदेशों में जाकर अंग्रेजों के शत्रु देशों की सहायता से उस युद्ध में उलझे अंग्रेजों पर आक्रमण किया जाये। लाला हरदयाल, सूफी अम्बा प्रसाद, निरंजनसिंह आदि को अमेरिका, ईरान आदि देशों में भेजने की योजना बनी। ब्रिटिश सरकार इस योजना को ताड़ गई और इन्हें बन्दी बनाने का प्रयास करने लगी। सरदार किशनसिंह भी इस बात को ताड़ गये और उन्होंने अपने भाई को सूफी अम्बाप्रसाद आदि के साथ मिर्जा हसन खाँ बनाकर ईरान भिजवा दिया (प्रारम्भ १९०९)। कई मुसीबतों को झेलते हुए दो-तीन वर्ष ईरान में रहकर वे (अजीतसिंह) टर्की चले गये पर सूफी अम्बाप्रसाद वहीं रहे। प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो गया। ईरान पर अंग्रेजों का प्रभुत्व होने से सूफी जी पकड़कर जेल में डाल दिये गये (१९१५) और गोली से उड़ा देने का ओदेश दे दिया गया। दूसरे दिन जब उन्हें जेल की कोठरी से निकाला गया तो वे समाधि अवस्था में मृत पाये गये। अंग्रेज अधिकारी हैरान हो गये। उनके जनाजे के साथ असंख्य ईरानी गए और उन्होंने बहुत शोक मनाया। उनकी कब्र पर आज भी हर वर्ष उत्सव मनाया जाता है। भगतसिंह ने लिखा है-

"वे सच्चे देशभक्त थे। उनके हृदय में देश के लिए दर्द था। वे भारत की प्रतिष्ठा देखना चाहते थे, भारत को उन्नति के शिखर पर पहुँचाना चाहते थे, तो भी आज भारत के बहुत कम लोग उनका नाम जानते हैं। उनकी कदर भी की तो ईरान ने, आज यहाँ आका सूफी का नाम सर्वप्रिय हो रहा है।"

सरदार अजीतसिंह टर्की से जर्मनी, पेरिस, स्विट्जरलैण्ड आदि देशों में घूम कर भारतीय क्रान्ति की योजना पूरी करने में लगे रहे। अंग्रेजों के भारतीय सैनिकों में विद्रोह का प्रचार करते रहे। इसी समय काबुल में राजा महेन्द्रप्रताप के राष्ट्रपतित्व में 'आजाद हिन्द सरकार' स्थापित हो चुकी थी। कई देशों में सहायता के लिए राजदूत भेजे गये पर विदेशी राष्ट्रों का समर्थन न मिलने से सारी योजना खटाई में पड़ गई। इसके बाद राजा जी १९४६ ई० तक भारत की स्वतंत्रता के लिए रूस, जर्मनी, जापान, अफ्रीका, अमेरिका, तुर्की, काबुल आदि देशों में घूमते रहे। १५ अगस्त १९४६ को राजा जी जब भारत वापिस आये तो इनके शरीर पर कुछ वस्त्र और साथ में कुछ पुस्तकें ही थी। पर विडम्बना तो देखिये, जिस व्यक्ति ने अपनी लाखों की सम्पत्ति दान में दे दी हो, जिस राजकुमार ने भरी जवानी में पत्नी और दो बच्चों को त्यागकर ३२ वर्ष वनवास का व्रत लिया हो, जो देश को स्वतन्त्र करवाने के लिए जर्मन के केसर, तुर्की के सुल्तान और अफगानिस्तान के शाह से मिला हो, जिसे रूस के राष्ट्रपति लेनिन ने पत्र लिखकर बुलाया हो, जो कभी यूरोप तो कभी एशिया, कभी चीन तो कभी रूस के जंगलों में भूखा-प्यासा मारा-मारा फिरता रहा हो, जिसकी सारी सम्पत्ति अंग्रेज सरकार द्वारा कुर्क कर ली गई हो, जिसकी पत्नी और पुत्र वियोग में बिलख-बिलख कर मर गए हों, ऐसे महान सपूत देश स्वतंत्र होने पर सनकी

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

भ्रान्ति-निवारण

प्राकृतिक आपदाएँ और ईश्वर

❑डॉ॰ **विवेक आर्य**, शिशु रोग विशेषज्ञ **drvivekarya@yahoo.com**

उत्तराखंड में जो हुआ उसका दोष ईश्वर को देना सबसे बड़ी अज्ञानता है क्योंकि मनुष्य ने वहाँ प्रकृति का अनुचित दोहन किया, पेड़ काट डाले, बांध बना डाले जबकि पर्यावरण वैज्ञानिकों ने स्पष्ट रूप से ऐसा न करने की चेतावनी दी थी

उत्तराखंड में वर्षा और भूस्ख़लन आदि से भयानक त्रासदी हुई है। हजारों व्यक्ति लापता हैं और करोड़ों रुपये की संपत्ति नष्ट हो गई है। ऐसे विपदा काल में भी कुछ दूषित मनोवृत्ति वाले व्यक्ति वहाँ की जनता का सहयोग करने के स्थान पर अपनी अपनी ढ़फली और अपना अपना राग अलाप रहे हैं। अपने आपको नास्तिक कहने वाले व्यक्ति कह रहे हैं कि अगर ईश्वर होता तो केदारनाथ के मंदिर और अपने भक्तों की रक्षा अवश्य करता, परन्तु ऐसा नहीं हुआ इसलिए ईश्वर का कोई अस्तित्व ही नहीं है।

अपने आपको बुद्धवादी कहने वाले नवबौद्ध कह रहे हैं कि हिन्दुओं के अशक्त भूदेवताओं की असलियत सामने आ गई, वे अपने मानने वाले भक्तों की रक्षा करने में असमर्थ हैं। मेरा उनसे एक सामान्य सा प्रश्न है कि कुछ वर्ष पहले उन देशों में सुनामी का कहर बरपा था जो बौद्ध मत को मानते हैं। जापान भी एक बौद्ध देश है, वहाँ तो अभी हाल ही में भूकंप और सुनामी से हजारों बौद्ध मत को मानने वालों की मृत्यु हो गई थी। क्या हम उनसे यह कहें कि उस समय महात्मा बुद्ध कहाँ थे, जब उन देशों पर कहर बरपा था? अफगानिस्तान, पाकिस्तान आदि में लाखों बौद्ध मठ और मंदिरों का विध्वंस इस्लामिक आक्रमण करने वालों द्वारा हो चुका है, उस समय बुद्ध कहाँ थे?

कुछ मुसलमान भाई तो सदा ऐसे ही मौकों की तलाश में रहते हैं जिससे हिन्दू समाज की निंदा की जा सके। वे क्यों भूल जाते हैं कि अनेक बार मक्का में हज यात्रा के अवसर पर अफरा तफरी फैल जाती है, जिसमें अनेकों हज यात्रियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है। उस समय कुरान में वर्णित ईश्वर यानि की अल्लाह कोई चमत्कार क्यों नहीं दिखाते?

वस्तुत: ऐसी आपदा के समय में ऐसे प्रश्न उठाने वाले व्यक्तियों का उद्देश्य सत्यासत्य को जानना नहीं होता अपितु एक दूसरे को नीचा दिखाने के उद्देश्य से वे ऐसे प्रश्न करते हैं। इन सभी प्रश्नों का उत्तर जानने के लिये हमें ईश्वर की कर्म फल व्यवस्था को समझना होगा। हम सब जानते हैं कि हमारे जीवन में जो कुछ भी घट रहा है वह हमारे अच्छे अथवा बुरे कर्मों का ही फल है। एक विद्यार्थी परीक्षा में अच्छे अंकों से तभी पास होता है जब वह उचित परिश्रम करता है। एक व्यापारी व्यापार में परिश्रम करने से ही आगे बढ़ पाता है। यह जग जाहिर है और इसे सभी मानते हैं। यह तो हुई उन कर्मों की बात जो हम अभी कर रहे हैं। कर्मों की

प्रकृति के अनुसार कुछ कर्मों का फल तुरन्त मिल जाता है, कुछ का कुछ समय बाद मिलता है और कुछ का फल बहुत समय पश्चात् मिलता है। ठीक इसी प्रकार जो फल हम अभी भोग रहे हैं वे या तो इस जन्म में या उससे पिछले जन्म में किये गये कर्मों के ही तो फल हैं। यही ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था है।

अब प्राकृतिक आपदा और ईश्वर के सज़्बन्ध को लीजिये। सृष्टि की रचना ईश्वर ने मनुष्य के भोगों के लिए की है। भोग का अर्थ यहाँ पर यह नहीं है कि मनुष्य जैसा चाहे वैसा करे; अपितु उसका अर्थ यह है कि मनुष्य को संसाधनों का दोहन उतना ही करना चाहिए जितना कि आवश्यक हो और उससे संसाधन विलुप्त या विकृत न हों।

उत्तराखंड में जो हुआ उसका दोष ईश्वर को देना सबसे बड़ी अज्ञानता है क्योंकि मनुष्य ने वहाँ प्रकृति का अनुचित दोहन किया, पेड़ काट डाले, बांध बना डाले जबकि पर्यावरण वैज्ञानिकों ने स्पष्ट रूप से ऐसा न करने की चेतावनी दी थी क्योंकि पर्वतों की मिट्टी उथली होती है और वर्षा ऋतु में नदियाँ विकराल रूप धारण करती हुई, अत्यंत वेग से पहाड़ों को काटती हुई अपने मार्ग में आने वाली सभी अवरोधों को तहस नहस कर डालती हैं। ऐसी परिस्थिति में पेड़ आदि को काटने से सभी अवरोध नष्ट हो जाते हैं जिसके कारण यह प्राकृतिक आपदा होती है।

प्रकृति और मनुष्य का सज़्बन्ध किस प्रकार का हैं? प्रकृति और मनुष्य का सज़्बन्ध राजा के खजाने के खजांची और खजाने जैसा है। यहाँ राजा ईश्वर है जिसने प्रकृति रूपी खजाने को अपने खजांची अर्थात् मनुष्य को देखरेख और इस्तेमाल करने के लिए दे दिया है। अब यह खजांची का कर्तव्य है कि उस खजाने को उचित रूप से प्रयोग करे और जैसे ही खजांची उस खजाने का गलत प्रयोग करना आरज़्भ कर देता है तो खजाने का हिसाब-किताब बिगड़ जाता है। मनुष्य भी जैसे ही ईश्वर की आज्ञा के प्रतिकूल होकर प्रकृति को नष्ट करने लगता है वैसे ही प्रकृति बाढ़, भूस्खलन, अकाल आदि के रूप में अपना कोप प्रदर्शित करती है। इस साधारण से सज़्बन्ध को न समझ कर नास्तिक लोग ईश्वर के न होने का कुतर्क देते हैं जो कि अज्ञानता को बढ़ावा देने के समान है। जबकि यहाँ पर ईश्वर की कर्म फल व्यवस्था स्पष्ट रूप से प्रतीत हो रही है।

ईश्वर का कार्य आपको निर्देशित करना है, इस निर्देश को ही ईश्वर द्वारा रक्षा करना कहते हैं। जैसे एक अध्यापक कक्षा में पाठ पढ़ा कर छात्रों को स्मरण करने का निर्देश दे देते हैं पर जो विद्यार्थी अध्यापक की आज्ञा का पालन नहीं करता और पाठ को याद नहीं करता वह परीक्षा में फेल हो जाता है, उस विद्यार्थी के माता-पिता फेल हो जाने पर उन अध्यापक को नहीं कोसते अपितु उस विद्यार्थी को ही दोषी मानते हैं।

ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों भिन्न-भिन्न सत्ता हैं। ईश्वर द्वारा रक्षा करने का जहाँ तक प्रश्न है- तो ईश्वर रक्षा करता है, परन्तु कैसे? ईश्वर रक्षा करता है- आपको सचेत करके, आपको किसी भी गलत कार्य के दुष्परिणामों से पहले ही अवगत कराकर, आपको आत्मबोध द्वारा उस कार्य को करने से रोकते हैं पर क्योंकि जीव कर्म करने में स्वतंत्र है और जब ईश्वर की आज्ञा का पालन नहीं करता तब ईश्वर की व्यवस्था से उसको उसका परिणाम भी अवश्य भुगतना पड़ता है। यही कर्म फल व्यवस्था का अटल सिद्धांत है। इस से बचने का कोई भी उपाय नहीं है, इस से बचने का कोई भी विधान नहीं है। इसलिए सबसे उत्तम है कि इस प्रकार के कर्म को ही करने से बचा जाना चाहिए।

किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करने से, प्रकृति से नाजायज छेड़-छाड़ से होती है तो फिर उसका दोष ईश्वर को क्यों देना।

गीत

यह उलझन किस विध सुलझाऊँ?

यह उलझन किस विध सुलझाऊँ?

सब जग पूछे पिता कौन है, कैसे नाम बताऊँ?।
नाम लिये बिन काम चले ना, नाम लेत सकुचाऊँ।।

ज्योति रूप है नाम तुम्हारा, दरपन जो लख पाऊँ।
कारि स्वरूप देख अपने को, आंचल में छिप जाऊँ।।

विश्व चराचर के तुम स्वामी, तुमरी थाह न पाऊँ।
मैं अधिपति हूँ पाप-पुंज का, कैसे जाल लगाऊँ।।

द्यावा पथिवी को तुम धारे, क्या तब पुत्र कहाऊँ।
मुझ से अपना आप न संभले, यही देख घबराऊँ।।

नाम लिये भी जग न माने, सौ विश्वास दिलाऊँ।
वेद-शास्त्र की देय दुहाई, मैं पीछा छुड़वाऊँ।।

-पं. बुद्धदेव विद्यालंकार

वृद्धजनों को सम्मान दें

❐डॉ॰ जगदीश गाँधी, सिटी मोन्टेसरी स्कूल, लखनऊ

वृद्धजन अनुभव तथा ज्ञान की पूंजी होते हैं। माता-पिता की सच्चे हृदय से सेवा करना परमात्मा की नजदीकी प्राप्त करने का सबसे सरल तथा सीधा मार्ग है।

माँ की ममता तथा करुणा से भरी बचपन की एक बड़ी ही मार्मिक कहानी मुझे याद आ रही है- सांसारिक स्वार्थ में डूबा एक व्यक्ति अपनी बूढ़ी माँ का दिल निकालने के लिए हाथ में छुरी लेकर गया और माँ को मारकर उसका दिल हाथ में लेकर खुशी-खुशी चला। रास्ते में उसे जोर की ठोकर लगी वह गिर पड़ा। छिटककर हाथ से गिरा माँ का कलेजा बेटे की तकलीफ से तड़प गया। माँ के दिल से आह निकली- मेरे प्यारे बेटे! चोट तो नहीं आयी। माँ तो सदैव अपने बच्चों पर जीवन की सारी पूँजी लुटाने के लिए लालायित रहती है। मोहम्मद साहब ने कहा था कि अगर धरती पर कहीं जन्नत है तो वह माँ के कदमों में है।

समाज में बढ़ रही घोर प्रतिस्पर्धा से नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। बुजुर्गों पर इसका प्रभाव ज्यादा है। उनकी उपेक्षा में बढ़ोतरी हुई है। जीवन के अंतिम पड़ाव में वे परिवार के सुख से वंचित हो रहे हैं। इस पर जल्द नियंत्रण नहीं किया गया तो स्थिति भयावह हो जाएगी। बच्चों में बुजुर्गों के प्रति स्नेह व लगाव पैदा करना बहुत जरूरी है। बच्चों को यह बताया जाए कि बुजुर्गों की सेवा से ही जीवन सफल हो सकता है। समाज तथा विशेषकर स्कूलों के लिए यह एक चुनौती है। इसके लिए मानवीय सूझबूझ से भरी व्यापक योजना बनाने की जरूरत है।

समाज में बुजुर्गों का परम स्थान है, लेकिन तेजी से बदलते समाज में उनका स्थान गिरता जा रहा है। विदेशों में पढ़ने व अधिक धन कमाने के लिए वहीं नौकरी करने वालों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है। आधुनिक सुख-सुविधाओं की चाह में वे स्वयं तो बड़े शहरों में रहना चाहते हैं लेकिन अपने मां-बाप को गांव-कस्बे में रखना चाहते हैं। बेटा जब अपने बूढ़े मां-बाप को अपने से दूर रखेगा तो उनकी सेवा कैसे हो सकती है?

वर्तमान भौतिक युग में आज सारे विश्व में वृद्धजनों के प्रति घोर उपेक्षा बरती जा रही है। विकसित देशों ने इस समस्या से निपटने के लिए सरकार की ओर से वृद्धजनों के लिए ओल्ड ऐज होम स्थापित किये हैं जिनमें वृद्धजनों के खाने-पीने व आवास की बेहतर सुविधायें, आधुनिक चिकित्सा, स्वस्थ मनोरंजन, खेलकूद, ज्ञानवर्धन हेतु लाइब्रेरी आदि-आदि सब कुछ उपलब्ध कराया गया है। साथ ही वृद्धजनों को सम्मानजनक जीवन जीने के लिए अच्छी खासी पेन्शन भी सरकार की ओर से दी जाती है। हमारे देश में वृद्धजनों के लिए ओल्ड ऐज होम की सुविधायें नहीं हैं। सीनियर सिटीजन को दी जाने वाली पेन्शन की राशि भी बहुत कम है। इस दिशा में सरकार तथा कॉरपोरेट जगत को सार्थक कदम उठाकर वृद्धजनों को सम्मानजनक जीवन जीने के अवसर उपलब्ध कराने के लिए आगे आना चाहिए।

प्राचीन काल में हमारे देश में संयुक्त परिवारों में वृद्धजनों को पूरा सम्मान, सुरक्षा तथा देखभाल मिलती थी। उद्देश्यहीन शिक्षा तथा भौतिकता की अंधी दौड़ ने हमारे देश में संयुक्त परिवारों की श्रेष्ठ परम्परा को बुरी तरह बिखेर दिया है। विशेषकर शहरों में एकल परिवार का रिवाज तेजी से बढ़ रहा है।

इस धरती पर हमारे भौतिक शरीर के जन्मदाता माता-पिता संसार में सर्वोपरि हैं। हमें उनका सम्मान करना चाहिए। जिन मां-बाप ने अपना सब कुछ लगाकर अपनी संतानों को योग्य बनाया वे संतानें जब बड़े होकर अपने वृद्ध मां-बाप की उपेक्षा करती हैं तो उन पर क्या बीतती है इस पीड़ा की अभिव्यक्ति कोई भुक्त-भोगी ही भली प्रकार कर सकता है। वृद्धजनों का मूल्यांकन केवल भौतिक दृष्टि से करना सबसे बड़ी नासमझी है। वृद्धजन अनुभव तथा ज्ञान की पूंजी होते हैं। माता-पिता की सच्चे हृदय से सेवा करना परमात्मा की नजदीकी प्राप्त करने का सबसे सरल तथा सीधा मार्ग है। साथ ही मानव जीवन के परम लक्ष्य अपनी आत्मा का विकास करने का श्रेष्ठ मार्ग भी है।

आत्मिक उन्नति

बंधन से मुक्ति की प्रार्थना

राज कुकरेजा, 786/8 अर्बन एस्टेट करनाल-132001 raj.kukreja.om@gmail.com

परम पिता परमात्मा ने मुझ जीव को मानव योनि में भेजा साथ ही सचेत भी कर दिया कि केवल मानव योनि में ही पूर्ण पुरुषार्थ से मोक्ष अर्थात् सब दु:खों से छूट कर ईश्वरीय आनन्द को पाने का अधिकारी बन सकता है, मैं नादान जीव इस सुनहरे अवसर का लाभ न उठा कर, ईश्वर के संकेत की अवहेलना कर के सांसारिक चकाचौंध में ऐसा रम गया कि विषय-भोग जो क्षणिक सुखदायी हैं, विभिन्न प्रकार के दुखों से युक्त, विकारी व अनित्य हैं, इन में ही सुख मान बैठा। अविद्या के कारण अपने निज स्वरूप को कि 'मैं एक निराकार, अणु स्वरूप चेतन आत्मा हूँ' को भुला दिया। जड़ व चेतन का ज्ञान भी जाता रहा। जड़ शरीर को चेतन मान कर इस के भरण-पोषण, लालन-पालन व साज-शृंगार पर अपना अमूल्य समय गंवा दिया और धन का अपव्यय भी कर दिया। अज्ञानता की चरम सीमा तो यहाँ तक पहुंच गई कि ईश्वर जो मेरे अति निकट है, जिसके साथ नित्य व अनादि सज़्बन्ध है उसे दूर, अति दूर मान लिया और उसकी सत्ता में भी संशय व भ्रम उठाने लगा। सांसारिक सज़्बन्ध पाश में ऐसा फंसा कि अपनी खुशियों का आधार सन्तान की खुशियों को मान लिया व उसके अस्तित्त्व में स्वयं का अस्तित्त्व लगने लगा और उसकी भौतिक उपलब्धियों को अपनी उपलब्धियाँ मान कर गर्व करने लगा। इस प्रकार जगत्सज़्मोहित माया रानी की पुत्रैषणा पाश की शृंखला में बंधता चला गया। ईश्वर की दी जड़ व चेतन सज़्पत्ति में इदन्न मम की भावना को ही छोड़ कर स्वयं को इस सब का स्वामी मान बैठा। ईश्वर की कृपा से कभी दान देने का या कहीं उपकार करने का अवसर मिला तो मन में यह लालसा रही कि दानवीर, उपकारी समझा जाऊं। इस प्रदर्शन की भावना से धन, सज़्पत्ति, पुत्र, कलत्र, सेवक मान, प्रतिष्ठा, उपाधि आदि लौकिक पदार्थों का संग्रह कर के अपने आप को बड़ा बनाने का प्रयत्न करता रहा। इस प्रकार स्वयं को पुत्रैषणा, लोकैष्णा, वित्तैषणा की जंजीरों में जकड़ लिया और इस सब का परिणाम ....समय हानि तथा निष्फल परिश्रम के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगा। चलना था श्रेयमार्ग पर- चल पड़ा प्रेय मार्ग पर.। ऐषणा की बेड़ियों ने ऐसा जकड़ा कि आध्यात्मिक पथ पर चलने में असमर्थ हो गया। अपने पिता परमात्मा से प्रीति करना चाहते हुए भी प्रीति नहीं कर पाता। 'विचारों की एकतानता व ज्ञान के एक समान बने रहने को ही ध्यान कहते हैं।' (पतंजलि) यहाँ तो ध्यान काल में विचारों का ताँता प्रवाहित होने लग जाता है। ध्यान काल में यह ऐषणा आसुरी वृत्ति बनकर भयंकर नाच नचाती है और कभी-कभी तो विचित्रता की पराकाष्ठा तक पहुँचा देती है। चेतन आत्मा जड़वत् होकर जड़ में चेतनता का आभास करने लगता है। इस कारण अध्यात्म क्षेत्र में अत्यन्त क्षति हुई है और आत्मिक व मानसिक स्तर पर निर्बलता आई है।

ऐषणा अविद्या का ही रूप है, जो सब से दृढ़ बंधन में बाँध कर दु:ख, पीड़ा व बाधा पहुँचाती है। क्योंकि अविद्या ही सब क्लेशों का मूल कारण है, दु:खों से बचना है तो अविद्या के तीनों बन्धनों- पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषण से छुटकारा पाना ही पड़ता है। बन्धनों से मुक्त होने का साधन ईश्वर से सहयोग की प्रार्थना है। इसलिए प्रार्थना है कि हे प्रभो! बन्धनों को शिथिल कर के इन से मुक्त कर दीजिए। ऐसी प्रेरणा करें कि ज्ञानी व सत्कर्मी बनें। हे भगवन! हम जीवनकाल में ही आपके कल्याणकारक ज्योतिस्वरूप को प्राप्त कर अपने दुर्लभ मनुष्य जन्म को सफल कर सकें। दयामय परमात्मन् ! आपके सहयोग के बिना न हम ज्ञानी बन सकते, न ही सुकर्मी। अतएव, हे अविनाशी स्वरूप प्रभो! बन्धनों से मुक्त होकर पाप कर्मों से रहित होकर आपके नित्य अविनाशी मोक्ष के लिए समर्थ होवें, मोक्ष के अधिकारी बनें। यही प्रार्थना है। इसे स्वीकार करें। स्वीकार करें। ओ३म् शांति: शान्ति: शान्ति:।

हम रक्षा के लिए किसे पुकारें

❒अध्यापक देवराज आर्य, आर्य टैंट हाऊस, रोहतक मार्ग, जींद

सब मनुष्यों को चाहिये कि सच्चिदानन्दस्वरूप नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वभाव सबके अन्तर्यामी परमात्मा को छोड़ के उसकी जगह में अन्य किसी पदार्थ की उपासना का स्थापन कभी न करें, किस प्रयोजन के लिए कि जो हम लोगों से उपासना किया हुआ-परमात्मा हमारी बुद्धियों को अधर्म के आचरण से छुड़ा के धर्म के आचरण में प्रवृत्त करे जिससे शुद्ध हुए हम लोग उस परमात्मा को प्राप्त होकर इस लोक और परलोक के सुखों को भोगें। -महर्षि दयानन्द

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।
यजुर्वेद २५/१८

पदार्थः- (वयम्) हम लोग (तम्) उस (ईशानम्) समस्त जगत् के स्वामी (जगतः+तस्थुषः+पतिम्) जंगम और स्थावर जगत के उत्पन्न कर्त्ता एवं पालन कर्त्ता, (धियञ्जिन्वम्) धारणावती बुद्धि को विकसित करने वाले परमात्मा की (हूमहे) स्तुति-प्रार्थना-उपासना करते हैं, (यथा) जिससे कि वह परमात्मा (नः) हमारे (वेदसां पूषा) विद्या आदि सब प्रकार के धनों का बढ़ाने वाला (रक्षिता) हमारा रक्षक, (पायुः) पालक (अदब्धः) हिंसा आदि से रहित, (वृधे) हमारी उन्नति एवं स्मृद्धि के लिये और (स्वस्तये) कल्याण के लिये (असत्) हमारी समृद्धि और कल्याण करे।

भावार्थः- सब विद्वान् लोग सब मनुष्यों के प्रति ऐसा उपदेश करें कि जिस सर्वशक्तिमान्, निराकार, सर्वत्र व्यापक परमेश्वर की उपासना हम लोग करें तथा उसी को सुख और ऐश्वर्य का बढ़ाने वाला जानें उसी पालन कर्त्ता परमात्मा की उपासना तुम लोग भी करो।

संसार में प्रत्येक मनुष्य सुख-शान्ति, आरोग्य, समृद्धि एवं निर्भयता के वातावरण में जीना चाहता है, परन्तु इनकी प्राप्ति के लिये उसे वेदविहित नित्य कर्मों का अनुष्ठान निष्ठापूर्वक प्रतिदिन अवश्य करना चाहिये। इसके साथ ही निषिद्ध कर्मों का त्याग भी करना चाहिये। ऐसा किये बिना सुख-शान्ति एवं निर्भयता की पृष्ठ भूमि तैयार नहीं हो सकती। आज संसार दुःख अशान्ति, भय, तनाव एवं नास्तिकता की ओर बढ़ रहा है। भूल गये हम मानवता के मार्ग को, ईश्वर भक्ति, पितृ सेवा, समाज कल्याण एवं राष्ट्र हित को। प्रत्येक व्यक्ति अपने हित साधन और स्वार्थ पूर्ति में तल्लीन है। इसके साथ ही अर्थ और काम की लिप्सा उसे दानव ही नहीं, राक्षस और पिशाच बनने के लिए मजबूर कर रही है।

अब प्रश्न है कि सुख-समृद्धि और रक्षा के लिए हम किसे पुकारें, किसे कहें? उक्त वेद मन्त्र में कहा गया है कि ऐ! संसार के लोगो, जो इस समस्त जड़, चेतन को उत्पन्न करके पालन करने वाला तथा धारणावती मेधा बुद्धि देने वाला, समस्त जगत में परिपूर्ण है; जो अविद्या, अज्ञानादि क्लेशों और दोषों से रहित है (कविः) सबका जानने वाला तथा (मनीषी) सर्व अन्तर्यामी तीनों कालों के व्यवहार का ज्ञाता है, उस (सविता-देव) परम-पिता परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना-उपासना बड़ी श्रद्धा और प्रेम से किया करो।

हम समझते हैं कि केवल ईश्वर की आराधना करने से सुख-शान्ति, समृद्धि तथा निर्भयता कैसे आ जायेगी? वेद सब सत्य विद्याओं का भण्डार है। सबसे पहले हम यह जानें कि अनादि पदार्थ कितने और कौन-२ से हैं? अनादि पदार्थ तीन हैं- ईश्वर, जीव और प्रकृति। ये तीनों पदार्थ सदा से है।

ईश्वर- सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, सर्वव्यापक चेतन सत्ता है, जो कभी किसी शरीर के बन्धन में नहीं आता। जिसका निज और मुख्य नाम 'ओ३म्' है। ईश्वर सृष्टि की रचना पालना तथा प्रलय कर्त्ता है तथा जीवों को उनके कर्मानुसार यथा योग्य फल देता है।

जीव- निराकार, अल्पज्ञ, अजर, अमर (अविनाशी) एक देशी है तथा चेतन एवं कर्म करने में स्वतन्त्र है, परन्तु कर्म फल भोगने में ईश्वर की व्यवस्था के अधीन है। जीवों में ज्ञान और प्रयत्न स्वाभाविक गुण हैं।

प्रकृति– अविनाशी, परिवर्तनशील, ज्ञान शून्य अर्थात् जड़ है। यह संसार का उपादान कारण तथा जीवों के लिये भोग और अपवर्ग का साधन है।

उक्त तीनों अनादि सत्तायें हैं। जिनमें दो चेतन तथा एक जड़ सत्ता है। इनमें परमात्मा सर्वज्ञ, अन्तर्यामी, सर्वव्यापक, चेतन होते हुए इस सृष्टि की नियामक एवं सर्वोत्तम सत्ता है। वही इस चेतन जड़ जगत् की रचना कर पालन कर रहा है। सूर्य, चन्द्र, तारे, ग्रह, नक्षत्र आदि उसी की आज्ञा में नियमपूर्वक कार्य कर रहे हैं। सभी जीवों के हृदयाकाश में वही विराजमान है।

जीवात्मा चेतन तो है, परन्तु अल्पज्ञ एवं एकदेशी होने के कारण जड़-प्रकृति के पाश (बन्धन) में फंस जाता है। जड़ प्रकृति का आकर्षण ही इतना मन-मोहक है कि वह अपने नियामक, पालन कर्त्ता और रक्षक को भूलकर मानव जीवन के मूल लक्ष्य को विस्मृत कर देता है। वेद अर्थात् ज्ञान मार्ग को भूलकर इन्द्रियों की तुष्टि के मार्ग पर चल देता है। इन्द्रियों के विषय इतने लुभावने हैं कि मनुष्य अपने आप को ही भूल जाता है अर्थात आत्मा की पुकार को सुनता हुआ भी नहीं सुनता। आंखें होते हुए भी अन्धा और कान होते हुए भी बहिरा बन जाता है। जब तृष्णाओं के जाल में मछली की तरह बुरी तरह फंस जाता है तो अब रक्षा के लिए किसे पुकारे? अब उसे परमात्मा की याद आती है और कहता है कि प्रभु मेरी रक्षा करो।

क्या आप जानते हैं कि इस आत्मा के कारण ही हमारा शरीर चेतन है। इसी चेतनता के द्वारा हमारा मन, बुद्धि, चित्त और इन्द्रियां कार्य करती हैं। यदि शरीर में से आत्मा निकल जाये तो शरीर ज्ञान-शून्य और जड़ हो जाता है। अब प्रश्न है कि आत्मा के बाद चेतन शरीर में किस वस्तु का सबसे अधिक महत्व है। उत्तर मिला कि चेतन शरीर में सबसे अधिक महत्व-बुद्धि का है। यदि हमारी बुद्धि प्रज्ञा और ऋतम्भरा स्तर की है तो हमारे मन के ऊपर शुद्ध बुद्धि का अधिकार रहेगा और हम श्रेष्ठ कार्य करते हुए निर्भय होकर मानव जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।

बुद्धि का दाता कौन है? बुद्धि का दाता वह परम पिता परमात्मा है। जड़ वस्तुओं की तरह बुद्धि कहीं मोल नहीं मिलती। इसलिये महर्षि दयानन्द सरस्वती गायत्री-मन्त्र का भावार्थ लिखते हुए कहते हैं कि-"सब मनुष्यों को चाहिये कि सच्चिदानन्दस्वरूप नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वभाव सबके अन्तर्यामी परमात्मा को छोड़ के उसकी जगह में अन्य किसी पदार्थ की उपासना का स्थापन कभी न करें, किस प्रयोजन के लिए कि जो हम लोगों से उपासना किया हुआ-परमात्मा हमारी बुद्धियों को अधर्म के आचरण से छुड़ा के धर्म के आचरण में प्रवृत्त करे जिससे शुद्ध हुए हम लोग उस परमात्मा को प्राप्त होकर इस लोक और परलोक के सुखों को भोगें"।

इस संसार के प्रत्येक क्षेत्र में आप जितनी भौतिक उन्नति देख रहे हैं, अनेक प्रकार के आश्चर्य जनक आविष्कार तथा परिवर्तन देख और सुन रहे हैं। ये सब बुद्धि का कमाल है। परन्तु जब तक मनुष्य इस भौतिक उन्नति को आध्यात्मिकता से साथ नहीं जोड़ता तब तक उसे शाश्वत शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। वेद इस विषय में स्पष्ट घोषणा कर रहा है कि-

विद्यां चाविद्यां च यस्तद् वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।। यजु० ४०/१४

अर्थात् विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ-२ जानो। यदि कोई केवल विद्या की उपासना करता है, केवल ज्ञान मार्ग की बातें करता है और वैदिक नित्य कर्मों को नहीं करता तथा दूसरा केवल कर्मों में ही लिप्त रहता है उसे वैदिक कर्मों का ज्ञान ही नहीं है, वे दोनों नीच दशा को प्राप्त होते हैं। अतः ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड दोनों को मिलाकर चलने में ही कल्याण हो सकता है।

जो ज्ञानी लोग अपने आत्मा में ही उस ईश्वर को देखते हैं, उनको ही सनातन शान्ति और सुख प्राप्त होता है। इस ब्रह्म से परे उत्तम व अधिक जानने योग्य और कुछ भी नहीं है। ईश्वर को जानने के लिए प्रथम मन की स्थिरता और शान्ति अवश्य होनी चाहिए। मन को वशीभूत करने में बुद्धि ही मुख्य कारण है। जब स्वामी रूप आत्मा के अधीन बुद्धि रहती है तो बुद्धि के अधीन मन और मन के अधीन इन्द्रियां हो जाती हैं।

इन्द्रियां जब ज्ञानानुकूल कार्य करती हैं तो हमें सुख-शान्ति की अनुभूति होती है। जीव के अन्तः करण में आदि काल से संचित कुवासना रूप अनेक गांठें विद्यमान हैं, वे ही सब दुःखों के मूल चिन्ता, शोक, भय और अविद्या को उत्पन्न करती हैं। ब्रह्म ज्ञान होने से उनकी निवृति होने पर भय, शोकादि सब दुःख छूट जाते हैं।

जीवात्मा जब परमात्मा के विचार, स्तुति-प्रार्थना-उपासना में लगता है और तदनुकूल आचरण भी करता है तब बुद्धि आदि शान्त होके ठहर जाते हैं। अतः अपनी रक्षा सुख-शान्ति एवं समृद्धि के लिए उस सर्वज्ञ, दयालु परमात्मा को पुकारें और कहें "धियो यो नः प्रचोदयात्" हे! प्रभु सविता देव हमारी बुद्धियों को सदा सन्मार्ग में प्रेरित करें-जिससे हम सुखी हों।

मार्जन मंत्र
पवित्रता का अभ्यास

मार्जन मंत्राः

ओ३म् भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

(ओं भूः) जगत् का जीवन अथवा प्राण-प्रिय ओम् (पुनातु) पवित्रता करे (शिरसि) शिर में।

(ओं भुवः) प्रकृति का उदान अर्थात् उसमें रह कर उससे पृथक् अथवा दुःखनाशक ओ३म् (पुनातु) पवित्रता करे (नेत्रयोः) आंखों में।

(ओं स्वः) जगत् का व्यान अर्थात् सर्व-व्यापी ओम् (पुनातु) पवित्रता करे (कण्ठे) गर्दन में।

(ओं महः) सब से महान् ओम् (पुनातु) पवित्रता करे (नाभ्याम्) नाभि में।

(ओं तपः) तप अर्थात् ज्ञान वा धर्म-स्वरूप अथवा दुष्टों को दण्ड देने वाला ओं (पुनातु) पवित्रता करे (पादयोः) टांगों में।

(ओं सत्यम्) नित्य, अविनाशी ओम् (पुनातु) पवित्रता करे (पुनः) फिर (शिरसि) शिर में।

(ओं खम्ब्रह्म) सर्व-व्यापी और सब से बड़ा ओम् (पुनातु) पवित्रता करे (सर्वत्र) सारे शरीर में।

'ओ३म्' से उतर कर 'भूः' 'भुवः' और 'स्वः' ये तीन ईश्वर के नाम बहुत महत्त्व के कहे गये हैं। विविध टीकाकारों ने इनके विविध अर्थ किये हैं, परन्तु यहाँ वही अर्थ पर्याप्त हैं जो ऊपर दिये गये हैं।

पण्डित चमूपति जी की अूमल्य कृति
'संध्या-रहस्य' का धारावाह प्रकाशन

आभ्यान्तरा शुद्धि मन की है। क्योंकि मन की समस्त क्रियाएँ इन्द्रियों द्वारा होती हैं, इसलिए एक एक इन्द्रिय का नाम लेकर उसके निग्रह की प्रार्थना की गई। सिर में सुविचार धारण, नेत्रों से शुभ दृष्टि पातन, ग्रीवा से शुद्ध मधुर वाक्य निष्कासन, हृदय में राग-द्वेष रहित विशाल प्रेम संस्थापना; जिसमें काम, क्रोध का लेश भी न हो, नाभि से सात्त्विक पदार्थों का पाचन, पांवों से सन्मार्ग सेवन-यह अन्दर की शुद्धि है।

उक्त आठ मंत्रों में भूः भुवः इत्यादि नाम लेकर शरीर के क्रमशः सब प्रदेशों की शुद्धि की प्रार्थना की गई है। अब यह तो प्रार्थना का ठट्ठा ही उड़ाना होगा कि मैला मुंह लेकर हम ईश्वर के आगे बैठ जाएं और इन मंत्रों के उच्चारण से यह आशा करें कि आकाश से जल बरसेगा और हमारे मुख का मैल बहा ले जाएगा। पहिले भी यह बात जताई थी और अब फिर उसी पर बल देते हैं कि 'प्रार्थना प्रतिज्ञा है'। पवित्रता मांगने का प्रयोजन यह है कि हम पवित्रता ग्रहण करेंगे।

फिर पवित्रता होती है दो प्रकार की-एक बाह्य अर्थात् बाहर की, दूसरी अभ्यन्तरा अर्थात् अंदर की। बाहिर की शुद्धि जलादि से होती है और अन्दर की सत्य से। मनु जी कहते हैं कि:-

अद्भिर्गात्राणि शुद्धयन्ति,
मनः सत्येन शुद्धयति।।

शरीर की शुद्धि :

मार्जन मंत्रों में पहले शिर प्रदेश की शुद्धि आई है। इस प्रदेश में शिर का बालों का वाला भाग, माथा, नेत्र तथा श्रोत्र आदि सब आ जाते हैं, आजकल बाल संवारने का फैशन हो रहा है और कंघा किए हुए, माथे पर के चमकीले बाल सभ्यता के चिह्न समझे जाते हैं। अतः बालक और युवक बाहर जाते हुए इन बालों को तेल लगाकर भड़कीला बना लेते हैं परन्तु शिर के नित्यप्रति धोने पर ध्यान नहीं देते, विशेषतया शीत के दिनों। यह बड़ी भूल है। वास्तविक सुन्दरता बनावश्रृंगार में नहीं, किन्तु शुद्धता में है। यदि शिर

के बाल बहुत छोटे करा दिए जाएं तो उनमें मैल रह ही न सके। कुछ हो, शिर को प्रतिदिन जल से अच्छी तरह धोना चाहिए और उसमें न तो मिट्टी ही रहने देनी चाहिए, न जूएं और कीट।

नेत्रों को इस प्रदेश से भिन्न भी ले लिया है, यह इसलिए कि सिर प्रदेश के श्रोत्रादि अन्य अंग इतना विशेष ध्यान नहीं चाहते, जितना नेत्र।

तत्पश्चात् ग्रीवा आती है। उसमें मुख भी सम्मिलित कर लो, क्योंकि इन दोनों की नाली एक है। इस भाग की शुद्धि के लिए प्रथम तो दातुन रोज करना चाहिए, जिससे दांतों और जिह्वा की मैल उतर जाए। दूसरे आचमन द्वारा कण्ठस्थ कफ की निवृत्ति करते रहो। कण्ठ का बाह्य भाग भी नहाते समय जल से धो लो। कई लोग कानों के पिछले भाग की परवाह नहीं करते, यह असावधानी हानिकर है। सम्पूर्ण ग्रीवा को अन्दर बाहर से धोवो।

अब आया हृदय-प्रदेश, अर्थात् छाती और उसके अंदर के अंग। बाहर तो पानी का प्रयोग करो और अन्दर के लिए प्राणायाम उपयोगी है, जिसका वर्णन आगे किया जाएगा।

नाभि का महत्त्व इन्द्रिय-स्पर्श प्रकरण में बताया गया था। इस भाग में उदर, तिल्ली, गुर्दा इत्यादि अंग आ जाते हैं। प्राणायाम इन सबको लाभदायक है। उदर के लिए प्रातःकाल दो घूंट पानी पीना गुणकारी होगा। गुर्दे और मसाने पर पानी बहाओ। यह स्मरण रहे कि मद्य, मांस, सिगरेट, लैमोनेड तथा बर्फ आदि इस प्रदेश के लिए विष हैं। अतः इन वस्तुओं को सर्वथा त्याग किए रखो।

'पादयोः' में गुप्त इन्द्रियों और टांगों का भी समावेश है। इस भाग को शूद्र समझ कर इससे असावधान मत हो। शेष शरीर के साथ इस अंग को मल कर धोना आवश्यक है। गुप्त इन्द्रियों के विषय में हम यह कहने से नहीं रह सकते कि ये जितनी गुप्त हैं उतनी अधिक शुद्धता चाहती हैं।

दुर्भाग्य से हमारी जाति आज नियम-भ्रष्ट हो चली हैं नहीं तो हमारे शुद्धता-सम्बन्धी नियम ऐसे हैं कि देख कर संसार चकित है। संक्षेप से हम इस विषय में यह शिक्षा देंगे कि-

शौच के समय गुदा को दो चार बार मिट्टी लगाकर धोवो, मूत्रेन्द्रिय को एक बार। फिर बाएं हाथ को जिससे इन्द्रियां साफ की हों, बार-बार मिट्टी लगाओ। और फिर दोनों हाथों को मिट्टी लगाकर खूब धोवो। मिट्टी इस लिये लगाते हैं कि इससे दुर्गन्ध का नाश होता है। परन्तु मिट्टी अति शुद्ध होनी चाहिए। साबुन से भी यह क्रिया की जाती है परन्तु, उससे कुछ लाभ नहीं। लघुशंका करने पर भी मूत्रेन्द्रिय को धो लेना चाहिए। क्या हमें यह बताने की आवश्यकता है कि हम इस विषय में कितने गिर गये हैं? हमें इस ओर ध्यान देते भी लज्जा आती है। अत्युक्ति के भय से हम यह न कहेंगे कि कोई विष्ठा आहार में मिलाता है, किन्तु साधारण जनता के खाने वाले हाथ प्रायः बिष्ठायुक्त तो होते ही हैं।

इस प्रकार शरीर के सारे भागों को पृथक-पृथक लेकर शिर का नाम आया। यह मानो नहाने की विधि बताई कि सारे अंगों को उक्त क्रम से धोकर फिर सिर पर पानी डालो और सर्वत्र यही क्रिया करो।

आभ्यान्तरा शुद्धिः

यह थी बाह्या शुद्धि। आभ्यान्तरा शुद्धि मन की है। क्योंकि मन की समस्त क्रियाएँ इन्द्रियों द्वारा होती हैं, इसलिए एक एक इन्द्रिय का नाम लेकर उसके निग्रह की प्रार्थना की गई। सिर में सुविचार धारण, नेत्रों से शुभ दृष्टि पातन, ग्रीवा से शुद्ध मधुर वाक्य निष्कासन, हृदय में राग-द्वेष रहित विशाल प्रेम संस्थापना; जिसमें काम, क्रोध का लेश भी न हो, नाभि से सात्त्विक पदार्थों का पाचन, पांवों से सन्मार्ग सेवन-यह अन्दर की शुद्धि है।

मार्जन का अभिप्रायः

उक्त आठ मंत्रों को कहते हुए मार्जन करना होता है, अर्थात् जिस अंग का नाम लिया उस पर थोड़ा सा जल छिड़क दिया। ऐसा क्यों? इस विधि में दो अभिप्रायः हैं। एक तो आलस्य त्याग। इस पर उदाहरण लीजिये- जब प्रातःकाल होने पर भी बालक नींद से सचेत न हो तो चतुर माता उसके मुख पर पानी के छींटे देती है। तब वह तत्क्षण उठ बैठता है। इसी प्रकार से यदि विद्यार्थी परीक्षा के दिनों अधिक पढ़ना चाहे, परन्तु नींद इसमें बाधक हो तो वह मुंह धो लेता है। एवम् संध्या में भी आलस्य होने लगे तो मार्जन कर लो।

दूसरा प्रयोजन इस क्रिया का यह है कि मंत्रों में पवित्रता की प्रार्थना है और पवित्रता होती है पानी से। क्रियायुक्त होकर हमारा प्रण दृढ़ हो जाता है, और हमें स्मरण रहता है कि जिन अंगों को मार्जन मंत्रों से पानी लगाया था उन्हें स्नान में पूर्णतया धोना चाहिए। यदि हमें संध्या का अभ्यास होता और उसमें आई हुई मार्जन क्रिया का अभिप्रायः याद रखते तो हमारे व्यवहार शुद्धता शून्य न होते। हम नहाने में दिखावा न करते और उस शौच का पूरा अनुष्ठान करते जिसे मनु ने धर्म का विशेष अंग बताया है। यदि नहाते समय इन मंत्रों के अर्थ पर ध्यान देकर एक-एक अंग धोएँ तो विशेष लाभ हो।

कब्ज के पन्द्रह कारण

आयुर्वेद शिरोमणि डॉ० मनोहर दास अग्रावत
एन०डी० विद्यावाचस्पति (प्राकृतिक चिकित्सक)

१-हाजत रोकना

पाखाने के हाजत की तुलना घड़ी की सुबह जगाने वाली घंटी (अलार्म) से की जा सकती है जो थोड़ी ही देर बोलती है। यह विवेक ध्वनि की भाँति है, जिस पर अमल न करने पर उसका सुनाई देना बंद हो जाता है। हाजत से शौच और बिना हाजत के शौच में बड़ा अंतर है। हाजत से शौच जाने पर पेट बहुत शीघ्र और अच्छी तरह से साफ हो जाता है। शौच का समय निश्चित करके ठीक उसी समय जाते रहने से और मन से मलाशय पर जोर डालने से कुछ दिनों बाद हाजत होने लगती है।

२-भोजन की अनियमितता

भोजन में अनियमितता रखकर शौच में नियमितता नहीं लायी जा सकती। कब्ज रहित लोगों का शौच क्रम बहुत कुछ भोजन क्रम से सम्बन्धित होता है। खाने का समय अस्त-व्यस्त हो जाने पर शौच में भी अनियमितता होना स्वाभाविक है। शौच के विचार में, भोजन पर विचार पहली शर्त होनी चाहिये। शौच का समय और परिमाण इस बात पर निर्भर है कि हमने भोजन कितनी बार किया, कब किया और कैसा किया और कितना किया।

अक्सर लोग शौच में नियमित होते हुए भी भोजन में नियमित नहीं होते। इस प्रकार कई-कई खुराकों का मल आंतों में पड़ा रहने के कारण भोजन में व्यतिक्रम करते रहने पर भी यद्यपि समय पर लोगों को शौच हो जाता है, पर है वह कब्ज की निशानी।

३-निद्रा में व्याघात

शौच की नियमितता का नींद से और सवेरे उठने के वक्त से भी कम सम्बन्ध नहीं है। यदि कोई कभी रात को कम सोये या देर-सवेर सोये तो शौच के क्रम में अवश्य अंतर पड़ जायेगा। सही समय से सोना, सही समय पर उठना और रात को सोने से कम से कम चार घंटे पहले रात का भोजन कर लेना कब्ज निवारण की एक अत्यावश्यक विधि है।

बिना भूख स्वाद के कारण अधिक मीठे पदार्थ खाना और अधिक खा लेना, तले हुए पदार्थ खाना, अच्छी तरह चबाये बिना खाना ये सब कब्ज के कारण हैं। लगातार कब्ज नाशक चूर्ण फांकते रहना, कब्ज बढ़ाने का ही काम करता है।

४-शौच में जल्दबाजी

आमतौर पर शौच का काम कुछ पलों का ही होता है। कभी-कभी तो बड़ी आंतों का पूरा आधा हिस्सा उसी एक खिंचाव में खाली हो जाता है। लेकिन प्रायः पहली किश्त में सिर्फ अवग्रहाभ मलाशय का मल निकलता है और उसी समय अवरोही आंतों का मल आगे सरककर फिर अवग्रहाभ आँतों को भरता है और पाखाने की दूसरी किश्त आती है।

ऐसे लोगों की तादाद बहुत बड़ी है जिनकी बड़ी आँतों का अवग्रहाभ गलत भोजन और हाजत रोकने के अत्याचार के फलस्वरूप मेले का हौज बन जाता है और प्रायः इतना अधिक फैल जाता है और एक हिस्सा दूसरे के ऊपर इस तरह चढ़ जाता है कि पूरी सफाई के लिए दोहरी और तिहरी कोशिश की जरूरत होती है। अतः ऐसे लोगों को शौच में ५ से १५ मिनट तक लग जाते हैं। जल्दबाजी करने के परिणाम स्वरूप उल्टा खिंचाव होने लगता है और शौच एकदम रुक जाता है।

५-शौच का टालना और मल का बंधा होना

लोगों में भी एक गलत ख्याल यह है कि शौच के संबंध में लापरवाही करने या उसे टालने से कोई खास नुकसान नहीं है। बहुत से लोग शौच जाने का काम अपने दूसरे कामों की सुविधा के अनुसार रखना चाहते हैं।

दूसरा आम गलत ख्याल है कि मल को खूब बंधा होना चाहिये। पूरी तरह बंधे हुए मल के मानी हैं-कब्ज। जब खुराक का फुजला ठीक वक्त से निकलता है तो पाखाना नरम पुल्टिस की तरह होना चाहिये।

६-पानी की कमी

कम पानी पीना कब्ज पैदा करता है क्योंकि शरीर में पानी की कमी होने पर आँतें खुराक में से अधिक मात्रा में पानी खींच लेती हैं। रक्त में पानी की कमी रहने से शरीर में तरल रस जितनी मात्रा में चाहिये, नहीं निकल पाता है। इससे मल खुश्क होकर कब्ज हो जाता है। शरीर को कम से कम २४ घंटे में ३ लीटर पानी चाहिये। दिन-रात में पसीने और पेशाब के रूप में इतना पानी निकल जाता है। ज्यादा पसीना आने वालों को तो और अधिक पानी पीना चाहिये।

प्यास लगे व्यक्ति को पानी पीना न भूलना चाहिये किन्तु भोजन के समय कम से कम पानी पीना अच्छा है। भोजन के समय अधिक पानी पीने से पाचक रसों की तेजी कम हो जाती है।

अगर तुझको रहती कब्जी है
तो पीने को पानी व खाने को सब्जी है।

७-पाखाने की गंदगी

पाखाने की असुविधा और गंदगी भी कब्ज के कारणों में एक है। गांधी जी कहते थे कि पाखाने का स्थान इतना साफ होना चाहिए कि जितना कि चौका। इसका तात्पर्य यह है कि खाते समय मन प्रसन्न रखने के लिए जैसा साफ स्थान जरूरी है उतना ही साफ स्थान मानसिक प्रसन्नता के लिए शौच के समय जरूरी है।

८-मानसिक चिन्ता

हमारे कोठे पर भी मन का बहुत असर पड़ता है। यदि व्यक्ति चिंतित मन लेकर पाखाने जाता है तो शौच साफ नहीं होता। चिंताग्रस्त व्यक्ति को अच्छी हाजत कभी नहीं होती। कुछ लोग पाखाने में ही सारी चिंताएं करते हैं, शौच भूल जाते हैं। ऐसे लोग भी कब्ज के शिकार होते हैं।

९-नशा

सभी नशे कब्ज पैदा करने वाले होते हैं।

१०-भूख से अधिक खाना

हमारे शरीर को जितनी आवश्यकता हो, उतना ही खाना चाहिए। यह विचार कि ज्यादा खाना ज्यादा फायदा करता है, गलत है। कहावत है-'खाएं जितनी भूख, सोएं जितनी नींद।'

११-बिना भूख खाना

बिना भूख के खाना छोटी और बड़ी दोनों ही आँतों के लिए हानिकारक है। भूख न लगने का अर्थ है आंतों पर पहले से बोझ का लदा होना।

१२-कम खाना

जरूरत से कम खाना भी कब्ज कारक है।

१३-बिना खुज्जेवाली खुराक

सभ्य कहिये या बड़े आदमी बनने के फेर में लोग आजकल खाने वाली वस्तुओं का ऊपरी भाग निकालकर जो खाया जा सकने वाला है हटा देते हैं जिसमें बड़े लाभ छिपे होते हैं। छिलका आदि बड़े गुणकारी होते हैं।

१४-बिना चबाये खाना

बिना चबाया भोजन ठीक से पच नहीं पाता और इस प्रकार कब्ज का जनक होता है।

१५-गलत खाना

बिना भूख स्वाद के कारण अधिक मीठे पदार्थ खाना और अधिक खा लेना, तले हुए पदार्थ खाना, अच्छी तरह चबाये बिना खाना ये सब कब्ज के कारण हैं। लगातार कब्ज नाशक चूर्ण फांकते रहना, कब्ज बढ़ाने का ही काम करता है।

'मनोहर आश्रम' स्थान-उम्मेदपुरा
पो० तारापुर (जावद)-४५८३३०
जिला नीमच (म०प्र०)

यह भी ख्याल रखें--

❒ बाहर से घर आने के बाद, किसी बाहरी वस्तु को हाथ लगाने के बाद, खाना बनाने से पहले, खाने से पहले, खाने के बाद और बाथरूम का उपयोग करने के बाद हाथों को अच्छी तरह साबुन से धोएं। यदि आपके घर में कोई छोटा बच्चा है तब तो यह और भी जरूरी हो जाता है। उसे हाथ लगाने से पहले अपने हाथ अच्छे से जरूर धोएं।

❒ घर में सफाई पर खास ध्यान दें, विशेषकर रसोई तथा शौचालयों पर। पानी को कहीं भी इकट्ठा न होने दें। सिंक, वॉश बेसिन आदि जैसी जगहों पर नियमित रूप से सफाई करें। खाने की किसी भी वस्तु को खुला न छोड़ें। कच्चे और पके हुए खाने को अलग-अलग रखें। खाना पकाने तथा खाने के लिए उपयोग में आने वाले बर्तनों, फ्रिज, ओवन आदि को भी साफ रखें। कभी भी गीले बर्तनों को रैक में नहीं रखें, न ही बिना सूखे डिब्बों आदि के ढक्कन लगाकर रखें।

जानते हो!
-प्रतिष्ठा

भारत का राष्ट्रीय ध्वज	: तिरंगा
भारत का राष्ट्रीय गान	: जन गण मन
भारत का राष्ट्रीय गीत	: वन्दे मातरम्
भारत का राष्ट्रीय चिह्न	: अशोक स्तंभ
भारत का राष्ट्रीय पंचांग	: शक संवत्
भारत का राष्ट्रीय वाक्य	: सत्यमेव जयते
भारत का राष्ट्रीय पुरस्कार	: भारत रत्न
भारत का राष्ट्रीय वृक्ष	: बरगद
भारत की राष्ट्रीय मुद्रा	: रुपया
भारत की राष्ट्रीय नदी	: गंगा
भारत का राष्ट्रीय पक्षी	: मोर
भारत का राष्ट्रीय पशु	: बाघ

हास्यम्
-आस्था गुड्डू

♦एक दुकानदार और ग्राहक में विवाद हो रहा था- कुछ समझदार लोगों ने उनका झगड़ा समाप्त करने की सोची।
एक- (ग्राहक से) क्यों भई! तुम्हारा क्या झगड़ा है?
ग्राहक- जी इस दुकानदार ने मेरे साथ धोखा किया है।
दूसरा- क्या धोखा किया है, कुछ बताओ तो सही--!
ग्राहक- देखिये, इसने मुझे यह रेडियो दी, कहा कि यह अमरीका की रेडियो है। लेकिन जब मैंने इसको चलाया तो इसमें से आवाज आई- यह ऑल इण्डिया रेडियो है।

♦एक आईसक्रीम वाला बार-बार चिल्ला रहा था, एक बार खाएगा तो हजार बार खाएगा।
यह सुन कर एक लड़के से रहा नहीं गया। वह उसकी नकल करते हुए बोला- 'मुज़्त में खिलाएगा तो लाख बार खाएगा'।

♦पापा- आसु, तुज़्हारे गणित में इतने कम नज़्बर क्यों आए?
आसु- गैर हाजिरी के कारण!
पापा- क्या तुम परीक्षा के दिन गैर हाजिर थी?
आसु- मैं नहीं, मेरे साथ वाली लड़की गैर हाजिर थी।

♦टीचर- विनोद, एक मुर्गी रोज दो अण्डे दे तो वह सप्ताह मे कितने अंडे देगी?
विनोद- सर, बारह।
टीचर- वह कैसे?
विनोद- जी, वह रविवार की छुट्टी भी तो मनाएगी न सर।

बाल वाटिका

सम्पादक : सुमेधा

प्रहेलिका:

❖ कई कपड़ों के पार हुई,
एक नहीं सौ बार हुई।।
फिर भी ना बेकार हुई,
और तेज मेरी धार हुई।।

❖ लोहा खींचू ऐसी ताकत है,
पर रबड़ मुझे हराता है,
खोई सूई मैं पा लेता हूँ,
मेरा खेल निराला है।

❖ तुम न बुलाओ मैं आ जाऊँगी,
न भाड़ा न किराया दूँगी,
घर के हर कमरे में रहूँगी,
पकड़ न मुझको तुम पाओगे,
मेरे बिन तुम न रह पाओगे,
बताओ मैं कौन हूँ?

उत्तर : सुई, चुंबक, हवा

विचार कणिका: पुरुषार्थ
-प्रतिभा बहन

❍ जीवन की सफलता कर्म या पुरुषार्थ पर निर्भर है।
❍ हीनता और निराशा की भावना मन में रखना बिना लड़े स्वयं अपनी पराजय स्वीकार करने के समान है।
❍ जहाँ पुरुषार्थ है, वहीं सुख सम्पत्ति और आनन्द है।
❍ पुरुषार्थ के महत्त्व को जानने वाला अपने जीवन में न कभी दु:खी होता है और न कभी अपना साहस छोड़ता है।
❍ परिश्रमी की सहायता परमात्मा करता है। संसार भी पुरुषार्थी को ही चाहता है।
❍ पुरुषार्थी संसार का कल्याण करते हैं और संसार उनका गुणगान करता है।
❍ आलस्य का त्याग और अपने कर्त्तव्य का पालन सफलता का मूल मंत्र है।
❍ संघर्ष का नाम ही जीवन है।

लकड़ी का कटोरा

एक वृद्ध व्यक्ति अपने बहु-बेटे के यहाँ शहर रहने गया। उम्र के इस पड़ाव पर वह अत्यंत कमजोर हो चुका था, उसके हाथ कांपते थे और दिखाई भी कम देता था। वे एक छोटे से घर में रहते थे, पूरा परिवार और उसका चार वर्षीय पोता एक साथ खाना खाते थे। लेकिन वृद्ध होने के कारण उस व्यक्ति को खाने में बड़ी दिक्कत होती थी। कभी मटर के दाने उसकी चम्मच से निकल कर फर्श पर बिखर जाते तो कभी हाथ से दूध छलक कर मेजपोश पर गिर जाता।

बहु-बेटे एक-दो दिन तो यह सब सहन करते रहे पर अब उन्हें अपने पिता की इस कमजोरी से चिढ़ होने लगी थी। 'हमें इनका कुछ करना पड़ेगा।' लड़के ने कहा। बहु ने भी हाँ में हाँ मिलाई और बोली, 'आखिर कब तक हम इनकी वजह से अपने खाने का मजा किरकिरा करते रहेंगे' और हम इस तरह चीजों का नुक्सान होते हुए भी नहीं देख सकते।'

अगले दिन जब खाने का समय हुआ तो बेटे ने एक पुरानी मेज को कमरे के कोने में लगा दिया। अब बूढ़े पिता को वहीं अकेले बैठ कर अपना भोजन करना था। यहाँ तक कि उनके खाने के बर्तनों की जगह एक लकड़ी का कटोरा दे दिया गया था, ताकि अब और बर्तन ना टूट-फूट सकें। बाकि लोग पहले की तरह ही आराम से बैठ कर खाते और जब कभी-कभार उस बुजुर्ग की तरफ देखते तो उनकी आँखों में आंसू दिखाई देते। यह देखकर भी बहु-बेटे का मन नहीं पिंघलता, वे उनकी छोटी से छोटी गलती पर ढेरों बातें सुना देते। वहाँ बैठा बालक भी यह सब बड़े ध्यान से देखता रहता, और अपने में मस्त रहता।

एक रात खाने से पहले, उस छोटे बालक को उसके माता-पिता ने जमीन पर बैठ कर कुछ करते हुए देखा, 'तुम क्या बना रहे हो?' पिता ने पूछा।

बच्चे ने मासूमियत के साथ उत्तर दिया, 'अरे मैं तो आप लोगों के लिए एक लकड़ी का कटोरा बना रहा हूँ, ताकि जब मैं बड़ा हो जाऊं तो आप लोग इसमें खा सकें।' और वह पुनः अपने काम में लग गया। पर इस बात का उसके माता-पिता पर बहुत गहरा असर हुआ, उनके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला और आँखों से आंसू बहने लगे। वे दोनों बिना बोले ही समझ चुके थे कि अब उन्हें क्या करना है। उस रात वे अपने बूढ़े पिता को वापस डिनर टेबल पर ले आये, और फिर कभी उनके साथ अभद्र व्यवहार नहीं किया।

दोस्तो, कहा भी गया है- जैसे बोवोगे वैसा काटोगे।

स्नेह का रंग

रंग- बिरंगी इस दुनिया
में एक स्नेह का रंग।
हर प्राणी को जीवन जीने
का सिखलाता ढंग।।

कटुता और कुटिलता के अब
दूर करें सब कांटे।
खुद भी मन में रखे हौंसला
सबको खुशियाँ बांटे।।

मन के मलिन विचारों को सब
प्रेम भाव से धो लें।
एक दूसरे को इस रंग में
आओ आज भिगो लें।।

इस दुनिया में सब रोगों की
है बस एक दवाई।
अपने जैसा औरों का दुःख
समझें सारे भाई।।

बड़े आदमी और
छोटे आदमी में अंतर

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के विषय में प्रेरणादायक संस्मरण : पंडित देवराम जी

एक बार स्वामी श्रद्धानन्द जी के दांत में अत्यंत पीड़ा उठी। पीड़ा से उन्हें तीव्र ज्वर भी हो गया। डॉ० सुखदेव ने उन्हें दवा आदि देकर आराम करने को कहा और उनकी देखरेख के लिए दो-दो घन्टे की बारी रात्रि में गुरुकुल में पढ़ने वाले ब्रह्मचारियों की लगा दी। तीन बजे से पाँच बजे तक में मेरी बारी थी। मैं तीन बजे से कुछ पहले स्वामीजी के कक्ष में पहुंच गया। पिछली बारी वाला मुझे आया देख चला गया। मैं चुपचाप कुर्सी पर बैठ गया कि महात्मा जी की नींद में कोई बाधा न हो। मैंने विचित्र बात देखी की तीन बजे का घंटा बजते ही महात्मा जी उठ गए। मैंने उनसे पूछा कि रात को दर्द का क्या हाल रहा। उत्तर मैं उन्होंने इन्हीं शब्दों में कहा-'भाई, दर्द तो बहुत था पर मैं चुपचाप पड़ा रहा। नींद भी नहीं आई। मैं देखता था, ब्रह्मचारी आते थे। अपनी नींद पूरी करके चले जाते थे। मुझे तो आदत नहीं अपनी तकलीफ दूसरे को कहूँ और कष्ट दूँ। अच्छा जाओ, अब तो मैं जग गया, तीन बजे तो मैं उठ ही जाया करता हूँ।'

इस घटना ने मुझ पर असर किया। मैंनें देख लिया कि बड़े आदमी और छोटे आदमी में कितना अंतर होता है। बड़े आदमी अपने कष्ट को कुछ नहीं मानते और दूसरों के कष्टों को दूर करने की उनमें चिन्ता रहती है। और छोटे आदमी को दूसरे के कष्ट की कोई चिन्ता नहीं होती, अपने ही कष्ट की सदा चिन्ता रहती है।

स्वामी जी के अलंकारों की यह उज्ज्वल वृत्ति उनके सारे जीवन में चमकती दिखती है। कष्ट में भी व्रत का पालन करने से मनुष्य मनुष्य बनता है, पक्का बनता है, समाज सेवक बनता है। स्वामीजी का उज्ज्वल वृति पक्ष हमारे अँधेरे अंतकरण में उजाला करे।

प्रेरक प्रसंग

❒डॉ० विवेक आर्य

वीतराग संन्यासी

काशी शास्त्रार्थ। सायं का समय था। आज प्रातः काशी के प्रमुख पंडितों से बनारस के महाराजा की अध्यक्षता में, करीब 50,000 काशी के निवासियों के समक्ष वेदों के प्रकाण्ड पंडित स्वामी दयानंद की वीर गर्जना कि 'वेदों में मूर्त्ति पूजा का विधान नहीं हैं।' को कोई भी जब असत्य न सिद्ध कर सका तो धोखे का प्रयोग कर सत्य को छुपाने का प्रयास किया गया था। परन्तु अपने आपको विद्वान् कहने वाले काशी के प्रकाण्ड पंडित यह भूल गए कि सत्य सूर्य के समान होता है, जो कुछ काल के लिए बादलों में छिप तो सकता है, परन्तु उसके बाद जब वह अपनी किरणों से बादलों का छेदन कर चमकता है तब उसका तेज पहले से भी अधिक होता है।

स्वामी दयानंद शास्त्रार्थ स्थल से लौट कर अपने निवास स्थान पर आ गए। उनसे मिलने नगर के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति आये। स्वामी जी तब एक उद्यान में टहल रहे थे। कई देर तक स्वामी जी के साथ विचार विमर्श करने और सत्संग करने के बाद भी उन व्यक्ति का कहना था कि आज स्वामी दयानंद के साथ इतना बड़ा अन्याय शिक्षा और धर्म की नगरी काशी में हुआ था पर स्वामी दयानंद के चेहरे पर तनिक भी शिकायत का आभास तक नहीं था। धन्य हैं वीतराग संन्यासी जो पर निंदा से अपने आपको सुरक्षित रखे हुए थे।

आज सभी आर्यों को स्वामी दयानंद के जीवन की इस प्रसंग से शिक्षा लेनी चाहिए कि परस्पर निंदा में अपने बहुमूल्य और कीमती समय को न लगाकर तप, स्वाध्याय और ईश्वर उपासना से जीवन का उद्धार करें।

भजनावली

ठाडे की महिमा

निर्बल दुःख भोग रहे हैं, बलवान फिरें हर्षाते।
देखा कमजोर विचारे बिन बात सताये जाते।।

कव्वे व चील के बच्चे ना कोई हाथ लगावे
चिड़िया का छोटा बच्चा बड़ी मुश्किल जान बचावे
उसे कव्वा ले उड़ जावे दुखिया रहें शोर मचाते-१

इकला बनराज बणी में बेखौफ रात-दिन डोले
जिस वक्त केहरी दाहड़े ना जीव दूसरा बोले
है कौन जो मुखड़ा खोले, सब जहाँ-तहाँ छुप जाते-२

इकले कमजोर कुत्ते को दो कुत्ते मिल दौड़ा लें
ठाडे कुत्ते के आगे वे अपने को दुबकालें
कुछ लोट के पिंड छुड़ालें, मुँह चाटें पूछ हिलाते-३

बलवान शत्रु के आगे सब बोलें मीठी वाणी
उसे लाकर दूध पिलावें हो भले मांगता पानी
ये झूठी नहीं कहानी, भय ठाडे का सब खाते-४

'श्रीपाल' रात दिन देखे ठाडे की महिमा न्यारी
जिसकी लाठी भैंस उसी की न्यूँ कहती दुनिया सारी
हीणे की सदा खुवारी, विद्वान कवि नित गाते-५

गुरु दक्षिणा

दयानन्द सुन मेरी एक बिगड़ी बात बना दे।
या नाव भंवर में बन मल्लाह बली लगा दे।।

दिन रात लुटाई होरी ठगियों ने लाई मंडी
सत् उपदेशक दुःख उठावें मारे हैं माल पाखण्डी
तू लेकर ओम की झंडी, दुनिया में धूम मचा दे-१

राज पाट धन माया दौलत का ना मैं भूखा
ना चाहता महल-हवेली करवाता ना कोई रुक्का
लूँ मार सब्र का मुक्का मेरी कुछ तो धीर बंधा दे-२

वाकई ये काम जबर है ये भी मैं बेटा मानूँ
पर तू भी तो लगन का पूरा ये पहिले ही से जानूँ
तू बन के वैदिक भानु एक ज्योति नई चमकादे-३

होती है विजय सत्य की मत दिल में शंका खईये
गांव-गांव और नगर नगर में जाकर संदेश सुनईये
''श्रीपाल'' तू भजन बनईये, और बीच सभा के गादे-४

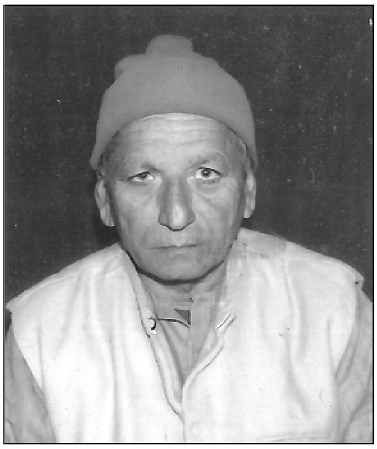

❑श्रीपाल आर्योपदेशक वैदिक मिशनरी
आर्य भवन खेड़ा हटाना, जनपद बागपत (उ० प्र०)

बिमारी कुर्सी की

लगी हुई है आज विश्व में सुनो बीमारी कुर्सी की।
संत, महन्त, गृहस्थी सबको है चिन्ता भारी कुर्सी की।।

भाई भाई का शत्रु पिता पुत्र से न्यारा है
कोई समर्थक कांग्रेस का कोई बीजेपी का प्यारा है
और कोई झंडा ठा रहा है, करे त्यारी कुर्सी की-१

कुर्सी कारण नेताओं ने गामों में चक्कर लाये कि ना
अछूत कहे गये भाईयों से जाकर के हाथ मिलाये कि ना
दर-दर धक्के खाए कि ना, कैसी हुश्यारी कुर्सी की-२

कुर्सी कारण राम लखन ने वन में धक्के खाये थे
कुर्सी कारण दुर्योधन ने कितने अनर्थ ढाये थे
शिशुपाल ने प्राण गंवाये थे, ये लाचारी कुर्सी की-३

चरण, देसाई मिल दोनों ने जब पूरा बल लाया था
इंदिरा गांधी विफल करी मुश्किल कुर्सी को पाया था
राजनारायण पर रंग आया था, थी मारा मारी कुर्सी की-४

नोटों के हार पहिनाये जा कुर्सी से जय जयकार रहे
दुश्मन भी प्यारे बन जा निशदिन होता सत्कार रहे
हर कोई खिदमतगार रहे, करें खातिरदारी कुर्सी की-५

कुर्सी कारण दुनियाँ जाने किस किस का संग्राम हुआ
रहा नहीं पानी का देवा ऐसा कत्लेआम हुआ
श्रीपाल दूर तक नाम हुआ, शोहरत भारी कुर्सी की-६

आर्य समाज जींद जं० का चुनाव सम्पन्न

-मास्टर पृथ्वीसिंह सिंह मोर, मंत्री आर्यसमाज

आर्य समाज रेलवे रोड जींद जंक्शन का चुनाव आगामी दो वर्ष के लिए सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ। चुनाव सभा की अध्यक्षता आर्यसमाज की वयोवृद्ध सदस्या माता सत्या भाटिया जी ने की। चुनाव में मा0 सतवीर आर्य जुलानी को प्रधान चुना गया। इनके अतिरिक्त मा0 पृथ्वीसिंह मोर को मंत्री व महासिंह आर्य को कोषाध्यक्ष चुना गया। अन्य पदाधिकारियों में रामनिवास आर्य उपप्रधान, सहदेव शास्त्री उपमंत्री, श्यामलाल आर्य पुस्तकालयाध्यक्ष व माता सत्या भाटिया लेखा परीक्षक चुनी गई। कार्यकारिणी सभा में सर्वश्री कृष्ण लाल गुप्ता, वेदपाल आर्य कोथ, अश्विनी कुमार आर्य, चतरसिंह आर्य, जयदेव आर्य, जगरूपसिंह तंवर, कमलचन्द शर्मा, शिवप्रकाश आर्य, हितेष मोर को चुना गया।

वेद प्रचार मण्डल मोहाली का वार्षिकोत्सव

वेद प्रचार मण्डल मोहाली के तत्वावधान में 11वां वार्षिक उत्सव संयोजक श्री विजय आर्य के निवास 42, फेज-2 मोहाली में आयोजित किया गया; (जो कि पहले उनके निवास के सामने वाले पार्क में होना था जो वर्षा के चलते घर के अन्दर करना पड़ा) मोदीनगर, मेरठ से पधारे वैदिक प्रवक्ता श्री संजय याज्ञिक जी ने यज्ञ का वैज्ञानिक स्वरूप बताते हुए यज्ञ का सम्पादन किया। श्री रविदत्त एवं उनकी पत्नी एवं श्री विजय आर्य एवं उनकी पत्नी श्रीमती शशि आर्य जी यजमान बने। इसके उपरान्त श्रीमती वीणा सेठी जी ने भजन प्रस्तुत किये। श्री नरेंद्र आहूजा 'विवेक' जी ने अपने व्याख्यान में परमपिता परमेश्वर को सभी मनुष्यों का सच्चा मित्र बताया। इसी अवसर पर फादर्स डे के अवसर पर दो वयोवृद्ध सदस्य पहले मेजर जनरल प्रेम मोंगा जी के पिता जी श्री बिहारी लाल, जिनकी आयु 94 वर्ष उनको एवं श्रीमती सत्यवती जिनकी आयु 88 वर्ष है, प्रधान श्री नरेंद्र गुप्ता जी की माता जी को आर्यसमाज ने प्रतीक चिह्न पटके देकर सम्मानित किया गया। सुश्री नम्रता सोनी जी ने अपने मधुर कंठ से सभी को प्रभुभक्ति के भजन सुनाये। तत्पश्चात् श्री रमेश जीवन जी; पूर्व प्रिंसिपल डी0 ए0 वी0 कालेज, चंडीगढ़ ने वैचारिक चिंतन देते हुए ईश्वर का सच्चा स्वरूप स्पष्ट किया। कार्यक्रम का संचालन श्री विजय आर्य जी ने किया। भजनोपदेशक श्री विजय पाल शास्त्री जी ने समाज को महर्षि देव दयानन्द द्वारा दी गई वैचारिक क्रांति को वर्तमान समस्याओं के समाधान का एक मात्र उपाय बतलाया। अंत में उपदेश देते हुए संजय याज्ञिक जी ने ईश्वर के सही स्वरूप को समझाते हुए बताया कि यदि हम ईश्वर के स्वरूप को समझें तो सभी पाखंडों, अन्धविश्वासों से बच सकते हैं। इसी अवसर पर आर्यसमाज फिरोजपुर के प्रधान श्री अतुल शर्मा एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मधु शर्मा एवं चंडीगढ़, पंचकुला तथा मोहाली की सभी आर्यसमाजों से पधारे गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। अंत में श्री विजय आर्य जी ने सभी का धन्यवाद किया एवं शांति पाठ के उपरांत ऋषि लंगर के साथ वार्षिक उत्सव संपन्न हुआ।

आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी द्वारा
वात्सल्य ग्राम में वैदिक सिद्धांतों पर उपदेश

अलीगढ जिले के चंडौस एवं खैर ग्रामों में आर्यसमाज के प्रचारार्थ आये आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी होशंगाबाद ने मथुरा से ट्रेन में बैठने के पूर्व साध्वी ऋतंभरा जी के विश्व प्रसिद्ध आश्रम वात्सल्य ग्राम में चल रहे बालिका व्यक्तित्व विकास शिविर में वेदों के प्रादुर्भाव तथा ईश्वर के स्वरूप पर लगभग सवा घंटा प्रवचन दिया। भारत के अनेक प्रान्तों की आठवीं कक्षा से लेकर एम0बी0ए0 तक सुपठित कन्याओं सहित आश्रम की सभी साधिकायें इसमें उपस्थित थीं। मान्या साध्वी ऋतम्भरा जी रोहिणी दिल्ली के विधायक जय भगवान् अग्रवाल जी के अस्वस्थ होने से उन्हें देखने गई थीं, अत: संयोग से अनुपस्थित रहीं। परन्तु काफी रूचि से सभी ने उपदेश सुना। यह आश्रम निराश्रित अनाथ कन्याओं को माँ दादी नानी उपलब्ध करवा कर परिवार का वातावरण देने का प्रयास है। आश्रम के लिए सत्यार्थ प्रकाश भेंट किया गया और इस अमूल्य ग्रन्थ के विषयों के बारे में संक्षिप्त प्रकाश डाला गया। भारत स्वाभिमान खैर अलीगढ के डॉ0 हरीश चन्द्र गौड़ एवं डॉ0 हेमलता गौड़ और आर्य समाज इंदौर की पूर्व मंत्री सुश्री अमिता पांचाल सहित साध्वी शिरोमणि जी, संपूर्णा जी, समाहिता जी अनेक बहनें उपस्थित थीं। बाद में स्वर्गीय भानु प्रताप शुक्ल शहीद संग्रहालय में क्रांतिकारियों के खून से बने चित्र दिखाए गए।

आर्या अमिता पांचाल, वात्सल्य ग्राम, वृन्दावन

क्रांति की बलिवेदी पर-- पृष्ठ १५ का शेष

समझे गये। १९१६ के आरम्भ में अमेरिका के युद्ध में भाग लेने की सम्भावना को जानकर सरदार अजीतसिंह जर्मनी से ब्राजील चले गये और १९३२ तक वहाँ रहकर जर्मनी चले गये। इसी समय सुभाषचन्द्र बोस से भी यूरोप में उनकी भेंट हुई। मुसोलिनी और इटली ने उन्हें आकर्षित किया और वे वहीं (रोम, नेपल्स) में रहने लगे। सितम्बर १९३९ में दूसरे विश्व युद्ध में मुसोलिनी को कहकर इन्होंने रोम रेडियो से प्रतिदिन हिन्दुस्तानी में एक प्रोग्राम प्रसारित किया। अंग्रेजों के भारतीय सैनिकों में विद्रोह उत्पन्न कर उनकी सहायता से अंग्रेजों को भारत से भगाने की योजना में पुनः जुट गये। जब सुभाषचन्द्र बोस कलकत्ता से काबुल होते हुए यूरोप पहुँचे, तो सरदार अजीतसिंह से भी उनका सम्पर्क हुआ। इटली व जर्मनी द्वारा बन्दी बनाये भारतीय सैनिकों को 'आजाद हिन्द सेना' के रूप में संगठित कर नेताजी के कार्य में सहयोग किया। किन्तु द्वितीय विश्व युद्ध में भी अंग्रेज जीत गये और २ मई १९४५ को ब्रिटिश सेना ने अजीतसिंह को बन्दी बना लिया। युद्ध की समाप्ति पर पण्डित जवाहरलाल नेहरू पर इस बात का बड़ा जोर डाला गया कि वे सरदार अजीतसिंह की अंग्रेजों से रिहाई के लिए पूरा प्रयास करें। उसी प्रयास के परिणामस्वरूप मार्च १९४७ में इस महान क्रांतिकारी ने कराची की भूमि पर कदम रखा, जहाँ से लगभग ३८ वर्ष पूर्व वनवास (विदेश) यात्रा आरंभ की थी। भगतसिंह अपने प्रिय चाचा के दर्शन करने के लिए अंत समय तक भी लालायित रहे। कहते हैं मुकदमे के आखिरी दिनों में भगतसिंह ने अपने एक साथी से कहा था-

"मेरी सिर्फ एक ख्वाहिश है, काश! कोई मेरे मरने से पहले मेरे प्यारे चाचा सरदार अजीतसिंह के दर्शन करा दे, जिनका मैं बिन देखे ही एक आशिक बन गया। जिनके नक्शे कदम पर चलकर मैंने इस इश्क की वादी में कदम रखा। जिनकी कोशिश ने मुझे अपनी मंजिल तक पहुँचाया।"

लगभग आधी शताब्दी स्वतंत्रता संग्राम लड़ने वाले इस योद्धा ने १५ अगस्त १९४७ की सुबह 'मेरी जिन्दगी का मकसद पूरा हो गया। अब मैं जा रहा हूँ।' कहकर सदा के लिए आँखे मूँद ली।

किस तरह संघर्ष करते हैं वतन के वास्ते,
किस तरह से जान देते हैं वतन के वास्ते।
फकत, दुनिया में तुम्हें थे यह बताने आये हम,
खुश रहो अहले वतन! चलते हैं 'वन्देमातरम'।।

सरदार अजीतसिंह के देश छोड़ने के बाद भी सरदार किशनसिंह की क्रांतिकारी गतिविधियाँ जारी रही। शचीन्द्रनाथ सान्याल, रास बिहारी बोस जैसे क्रांतिकारी उनके सम्पर्क में रहते थे। लार्ड हार्डिंग पर बम फैंकने के बाद रास बिहारी बोस को पंजाब में सुरक्षित रखने का प्रबन्ध सरदार किशनसिंह ने किया था। कपूरथला के श्री रामशरण दास को इस बात के लिए प्रेरित किया कि उनकी पत्नी रास बिहारी के साथ उनकी श्रीमती बनकर रहे। ऐसी ही सहायता उन्होंने कामागाटामारू काण्ड के विख्यात बाबा गुरुदत्तसिंह को काफी समय फरार रहने में दी थी। गदर पार्टी के विद्रोहियों को भी उनकी सहायता मिलती थी। ब्रिटिश सरकार ने कई बार उन्हें मुकदमें में फँसाया और कई वर्ष तक उन्हें जेल-यातना सहनी पड़ी। उन यातनाओं के प्रभाव से उन पर लकवे का आक्रमण हो गया। वे उन सौभाग्यशालियों में से थे, जिन्हें अपने द्वारा लगाये गये वृक्ष के फल खाने का अवसर मिलता है। भारत को स्वतंत्र देख ३० मई १९५१ को उन्होंने अपनी जीवन लीला समेट ली।

स्रदार अर्जुनसिंह की तीसरी पीढ़ी के क्रान्तिकारी भगतसिंह ने बलिदान भावना को उच्चतम शिखर पर पहुँचाया और इतिहास में एक अमिट स्थान प्राप्त किया। इस बलिदानी वीर की चर्चा पहले कई लेखों में की जा चुकी है। भगतसिंह के बलिदान के बाद उनके छोटे भाई कुलतारसिंह भी देश की आजादी के लिए जेल में गये। जब वे माण्ट गुमरी जेल में नजरबंद थे तो बहुत दिनों बाद मुलाकात की मंजूरी मिली थी और भविष्य भी अज्ञात था। माता-पिता, पत्नी और भाई-बहन को ही मिलने की अनुमति मिली तो कुलतार सिंह की छोटी चाची (सरदार स्वर्णसिंह की धर्मपत्नी) श्रीमती हुकमकौर ने जेल के द्वार पर ऐसा करुण विलाप किया कि सुनने वालों की छाती फट रही थी। उसकी ममता ने जेल वालों को भी नियम तोड़ने पर विवश कर दिया। यह देवी मात्र २० वर्ष की अवस्था (१९१०) में विधवा हो गई थी। इससे पूर्व भी स्वर्णसिंह जेल में व मृत्यु शय्या पर रहे। जगतसिंह व भगतसिंह अपनी दोनों चाचियों (अजीतसिंह के विदेश जाने पर श्रीमती हरनाम कौर) के सूनेपन को दूर करने के खिलौने बने, पर जगतसिंह भी छूट गया। भगतसिंह ही सहारा था, वह भी क्रांति-पथ का पथिक बन गया। अब कुलतार सिंह को ही अपना बेटा मानकर वह जी रही थी। श्री लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु से उन्हें ऐसा धक्का लगा कि वे हर समय यही कहती रहती 'हाय, पाकिस्तान के राजा ने हमारे राजा को मार दिया' और मात्र ३ दिन बाद (१४ जनवरी १९६६) ही वे महाप्रस्थान कर गई। इस स्वतंत्रता के लिए न जाने कितनों का सुख-यौवन कुर्बान हुआ है। क्या हम इसकी कीमत समझेंगे?

आर्यसमाज सिलीगुड़ी के संस्थापक सदस्य श्री रतिराम शर्मा जी की धर्मपत्नी

श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा का 85 वर्ष की आयु में निधन

आर्यसमाज सिलीगुड़ी के संस्थापक सदस्य श्री रतिराम शर्मा जी की धर्मपत्नी श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा का 85 वर्ष की आयु में 28 जून 2013 को सिलीगुड़ी में निधन हो गया। सिलीगुड़ी तथा इसके आस पास के क्षेत्र में आर्यसमाज के प्रचार प्रसार में श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा ने सर्वदा अपने पति का आगे बढ़ कर साथ दिया। सिलीगुड़ी में महिला आर्यसमाज आरंभ करने में उनका अविस्मरणीय योगदान रहा। उनमे संगठन की अपूर्व शक्ति थी। अतिथि सत्कार उनका अभिन्न स्वभाव रहा। उन्हें दूसरों को खिलाने में दैवीय आनंद प्राप्त होता था। श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा ने आर्यसमाज के कई ऐतिहासिक कार्यक्रमों में भाग लिया। अपनी संतानों को गुरुकुल की शिक्षा देने में पति का सहयोग किया। यज्ञ उनके जीवन का अविभाज्य अंग रहा। रुग्ण अवस्था में यज्ञ न कर पाने पर भी भोजन यज्ञ के बाद लेने में उनका आग्रह रहा।

सिलीगुड़ी आर्यसमाज में दातव्य औषधालय के सञ्चालन हेतु अर्थ संग्रह करना, देना तथा दूसरों को प्रेरित करना उनका स्वभाव था। सत्संग में वे प्रथम दानपात्र में योगदान करतीं, फिर लोगों को प्रेरित करतीं। उन्हें बहुत से भजन कंठस्थ थे तथा वे अपने सत्संगों में उनका गायन करके दयानंद के संदेशों का प्रचार करती थीं। कर्मठता, लगन, निष्ठा, त्याग, सत्कार उनके स्वभाव के अभिन्न अंग थे। श्री रतिराम शर्मा अपने जीवन का पूरा श्रेय उन्हें समर्पित करतें हैं। आर्यसमाज का प्रचार, गुरुकुलों का संवर्धन, या सिलीगुड़ी में ब्राह्मण समाज के ऋषि भवन के विस्तार का प्रकल्प, सभी कार्यों में कंधें से कन्धा मिला कर श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा ने अपने पति का सहयोग किया।

चार पुत्र और चार पुत्रियों का भरा पूरा परिवार और चार पीढ़ी का मिलन स्वर्ग के सुख का आनंद है। श्रीमती गिन्नी देवी शर्मा ने ईश्वर की कृपा से जीवन का सुख पूर्वक यापन किया। श्री राजकुमार शर्मा, डॉ0 आनंद कुमार शर्मा, श्री विजय कुमार शर्मा एवं श्री अरुण कुमार शर्मा उनके चार पुत्र और श्रीमती राजबाला, श्रीमती सत्यबाला, श्रीमती भारती एवं श्रीमती यशी उनकी चार पुत्रियाँ अपने अपने स्थानों पर सपरिवार माता जी से प्राप्त ज्ञान और संस्कारों को आगे बढ़ाने का कार्य कर रहें हैं।

धरने पर पहुँचकर समर्थन दें।

सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों में भारतीय भाषा में भी न्याय पाने के लिये श्यामरुद्र पाठक का 24, अकबर रोड, दिल्ली पर 4 दिसंबर 2012 से धरना जारी। आपसे अपील है कि धरने पर पहुँचकर समर्थन दें।

निवेदक :

लाला हेमराज बंसल (राष्ट्रीय अध्यक्ष) रमेश कुमार आर्य; (राष्ट्रीय महासचिव) राजभाषा संघर्ष समिति दिल्ली (पंजीकृत) संपर्क : 9810639093, 8745 8745 38, 9313043940

श्रावणी के उपलक्ष्य में

आर्यसमाज जींद शहर का वेद प्रचार कार्यक्रम

दिनांक ९ से ११ अगस्त २०१३

प्रवचन– पं० विरेन्द्र शास्त्री, सहारनपुर,

भजन– पं० कुलदीप जी बिजनौर

आप सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

इस अवसर पर आर्यसमाज के वयोवृद्ध कार्य कर्त्ताओं का सम्मान भी किया जाएगा।

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-६-२०१३ को प्रकाशित।

चौ० भलेराम आर्य की धर्मपत्नी

स्व० श्रीमती धर्मो देवी की स्मृति में विशेष यज्ञ का आयोजन

-सुखवीर सिंह दहिया

चौ० भलेराम आर्य (सांघी वाले) की धर्मपत्नी स्व० श्रीमती धर्मोदेवी की स्मृति में उनके निवास स्थान एफ-८ इन्द्रप्रस्थ कालोनी, सोनीपत रोड, रोहतक में विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया। उनके सुपुत्र व उनकी धर्मपत्नी पूनम रानी यज्ञ के मुख्य यजमान थे। उन्होंने यज्ञ में विशेष आहुति डालते हुए अपनी माताजी स्व० श्रीमती धर्मादेवी की ६६ वर्ष की आयु होने पर ६६ पौधे लगाने का संकल्प लिया। अपनी माता जी के सरल स्वभाव व किसी की निन्दा न करना, तथा किसी से झगड़ा न करना की विचारधारा से प्रेरित होकर एक त्रिवेणी (बड़, पीपल, नीम) किसी स्कूल या अन्य किसी सार्वजनिक स्थान पर लगाने का संकल्प लिया। अपनी माता जी की धार्मिक भावना के अनुसार कुछ धार्मिक साहित्य का भी वितरण किया। १०० पुस्तकें हमारी दिनचर्या, ४०० प्रतियाँ गीता सार, भारत को भारत रहने दो तथा प्राण ऊर्जा पर आधारित दिनचर्या वितरित की। भविष्य में भी अपनी माता जी की तरह धार्मिक संस्थाओं से जुड़े रहने का संकल्प किया। यज्ञ के ब्रह्मा पूज्य जगदेवसिंह जी विद्यालंकार ने यज्ञ के पश्चात् यजमान परिवार को आशीर्वाद दिया तथा अपनी माता जी के गुणों को सदा याद रखने की प्रेरणा प्रदान की। यजमान दम्पती ने सभी का धन्यवाद किया और उनके भोजन की व्यवस्था की। इस अवसर पर परिजन, रिश्तेदार तथा सुखवीर सिंह दहिया, रणवीरसिंह मान, कंवरसिंह गुलिया, अजीत शास्त्री आदि गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

कर्णसिंह आर्य के सुपुत्र का निधन

आर्यसमाज रामनगर जींद के प्रधान श्री कर्णसिंह आर्य के सुपुत्र श्री सत्यव्रत आर्य का २२ वर्ष की अवस्था में दुःखद निधन हो गया। वे पिछले कुछ समय से बीमार चल रहे थे। उनके निधन पर जींद के प्रमुख आर्य समाज सेवियों, गणमान्य नागरिको ने परिजनों को सांत्वना दी है और परमेश्वर से प्रार्थना की है कि वें उन्हें यह दुःख सहने की शक्ति प्रदान करें। सत्यव्रत जी का अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक विधान से किया गया, जिसमें भारी संख्या में लोग उपस्थित हुए।

अन्तत:

क्या सिखा रही हैं फिल्में?

-डॉ० विवेक आर्य

हाल ही में रणबीर कपूर और दीपिका पादुकोण की 'ये जवानी है दीवानी' फिल्म रिलीज हुई। पहले हफ़्ते में ही 100 करोड़ का व्यापार करके इस फिल्म ने कमाई के सभी रिकॉर्ड तोड़ डाले। निर्माता से लेकर फिल्म के अभिनेता सभी अत्यंत प्रसन्न हैं, कमाई जो हुई है जबरदस्त। इस फिल्म को देखने वाले सबसे अधिक वे युवा थे जिन्होंने अभी जवानी की दहलीज पर कदम रखा ही है जो अभी तक कॉलेज आदि में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं, जो अभी भी अपने माता-पिता पर निर्भर हैं और जिन्होंने अभी तक जीवन में आने वाली कठिनाइयों का सामना करना आरंभ नहीं किया है।

पूरी फिल्म में कुछ भ्रामक बातों को दिखाने का सबसे अधिक प्रयास किया गया है जैसे असली जिन्दगी वही युवा जीता है जो शराबी हो, जुआरी हो, चरित्रहीन हो, पढ़ाई में मुश्किल से पास होता हो और जो यह सब ऐश ? नहीं करता, जो पढ़ने में मेहनत करता है, माता-पिता का आज्ञाकारी है वह दब्बू है, पुराने विचारों वाला है, समाज में पिछड़ गया है और उसे अपनी जिंदगी जीनी नहीं आती है।

फिल्म बनाने वालों के लिए तो पैसा सर्वोपरि है, उन्हें मालूम है कि जवानी में जोश अधिक होता है, परिपक्वता कम होती है, ऐसे में निश्चित रूप से माता-पिता अपने बच्चों को नियन्त्रित करने के लिए, उनके भविष्य को ध्यान में रखकर, अपने अनुभव के आधार पर अपने बच्चों की सभी जायज माँगें पूरी करते हैं और सभी नाजायज माँगों पर पाबन्दी लगाते हैं। ऐसे में बहुतर युवा इन पाबंदियों से जो उनके भले के लिये लगाई जाती हैं, न केवल आक्रोशित होते हैं अपितु विरोधी भी बन जाते हैं।

उनकी यह विरोधी मानसिकता माता-पिता के समक्ष दबी रहती है। इस मानसिकता को जो उनके जीवन के लिए निश्चित रूप से हानिकारक है, हवा देने से युवा सभी प्रकार की बुरी आदतों को अपना लेता है, जैसे शराब पीना, जुआ खेलना और चरित्रहीनता।

इस फिल्म में यही दिखाया गया है। शराब पीने वाला अभिनेता और अभिनेत्री, जुआ खेलने वाला उसका मित्र, एक चरित्रहीन अभिनेत्री आदि आदि। सामान्य रूप से शराब आदि का विज्ञापन करना मना है पर क्या फिल्मों में अभिनेता-अभिनेत्रियों को शराब पीते हुए दिखलाना शराब आदि का विज्ञापन नहीं है ?

इसका स्पष्ट प्रभाव युवाओं पर क्या पड़ेगा जिनके लिए ये अभिनेता रोल मॉडल होते हैं ? प्रभाव यह पड़ेगा कि जो युवा शराब नहीं पीते वे शराबी बन जायेंगे, जो जुआ नहीं खेलते वे खेलने लगेंगे और न जाने क्या क्या।

संयम और आत्म नियंत्रण के सिद्धांत पर आधारित हमारी संस्कृति अपनी उच्च सोच और दूरगामी नीतियों के कारण श्रेष्ठ है।

इसकी अवहेलना कर भोगवाद में बहने से उसके दुष्परिणाम समाज के सामने हर रोज आ रहे हैं जैसे- छोटी-छोटी बच्चियों से बलात्कार, हिंसा, चोरी, लूटमार, तलाक, टूटते परिवार, आत्महत्या, कोर्ट कचहरी के चक्कर आदि आदि जिनसे आये दिन समाचार पत्र भरे रहते हैं।

इसलिए फिल्मों के माध्यम से सकारात्मक सन्देश देने का प्रयत्न होना चाहिए न कि भोगवाद को बढ़ावा देना चाहिए।

ओ३म्

M.A. : 9992025406
P. : 9728293962

NDA No. : 236964
DL No. : 2064

अशोका मैडिकल हॉल

अशोक कुमार आर्य Pharmacist, आयुर्वेद रत्न
R.M.P.M.B.M.S.

हमारे यहाँ पर नजला, पथरी, ल्यूकोरिया, शारीरिक कमजोरी, दाद, खारीश का आयुर्वेदिक देशी जड़ी बूटियों द्वारा ईलाज किया जाता है;

विशेष : हमारे यहाँ जीवन दायिनी च्यवनप्राश मिलता है।

अशोका मैडिकल हाल नजदीक वैद्य रामचन्द्र हस्पताल, पटियाला चौक, जीन्द

पुस्तकें मंगाने वाले ग्राहकों के लिए जानकारी
मनोहर आश्रम की लोकप्रिय पुस्तकें छपकर तैयार हैं

सर्वजन हिताय! सर्वजन सुखाय!! के उद्देश्य से–

डॉ. मनोहरदास अग्रावत एन.डी. 'आयुर्वेद शिरोमणि'

द्वारा लिखित प्राकृतिक चिकित्सा की शोधपूर्ण पुस्तकें–

1– जीवन रक्षा, पृष्ठ 202 मूल्य 85 रुपए
2– स्वास्थ्य ज्योति, पृष्ठ 162 मूल्य 75 रुपए

इन स्वास्थ्य विषय की पुस्तकों पर–मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार और दिल्ली से चिकित्सकों के प्रशंसापत्र प्राप्त हैं। बिना ऑपरेशन पथरी, मोतियाबिन्द, बवासिर (मस्सा) आदि रोगों की सरल चिकित्सा एवं बालक, स्त्री, पुरुषों के प्रत्येक राग के सरल उपचार इन दोनों पुस्तकों में लिखे गए हैं। सर्पविष व बिच्छु विष उतारने के सरल व सफल उपचार हैं। दोनों पुस्तकें एक साथ मंगाने पर इनका मूल्य 160 रुपए। डाक मनिआर्डर से भेजने पर आश्रम की ओर से रजिस्ट्री डाक खर्च रुपए 25 होता है वह लगाकर पुस्तकें आपको भेज दी जाएंगी। वी.पी. भेजने का नियम अब नहीं है।

हमारे मो.बा.नं. 08989742047
हमारा पता– व्यवस्थापक–'मनोहर आश्रम' स्थान–उम्मैदपुरा
पो. तारापुर जावद)–458330, जिला–नीमच (म.प्र.)

ओ३म्

शांतिधर्मी एक अद्वितीय पत्रिका है

इसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये स्वस्थ और सुरूचिपूर्ण सामग्री होती है।

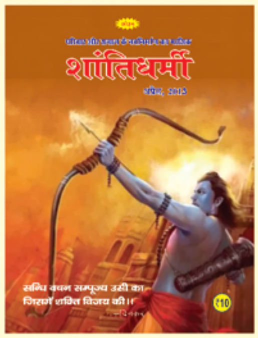

- **शांतिधर्मी** में धर्म-दर्शन के रहस्य, राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर अधिकारी विद्वानों के श्रेष्ठ विचार होते हैं।
- **शांतिधर्मी** भारतवर्ष के गौरवपूर्ण इतिहास की झलक दिखाता है।
- **शांतिधर्मी** वह मार्ग दिखाता है, जिसे पाने के लिये लोग भटक रहे हैं। परिवार में समाज में सह-अस्तित्व व अन्तरात्मा में सुख शांति का संदेशवाहक है।
- **शांतिधर्मी** उस अध्यात्म का प्रचार करता है-जिसे अपनाने में देश-काल, जाति, मजहब, सम्प्रदाय की सीमाएँ आड़े नहीं आतीं। यह सच्चे ईश्वरीय ज्ञान का प्रचारक है।
- **शांतिधर्मी** स्वाध्याय भी है और स्वस्थ मनोरंजन का साधन भी।
- **शांतिधर्मी** प्रत्येक श्रेष्ठ-धार्मिक-राष्ट्रप्रेमी-मानवतावादी-व्यक्ति के लिये एक विचार-सूत्र है। प्रत्येक श्रेष्ठ परिवार का आभूषण है।

शांतिधर्मी पढ़िये-

अपने प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, ईश्वर के प्रति सर्वांगीण दायित्वों को जानिये।

जीवन के जटिल व गूढ़ रहस्यों को सहज ही सुलझाईये।

शान्तिधर्मी कार्यालय

756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक)

जीन्द-126102 (हरियाणा)

मो. 09416253826 E-mail : shantidharmijind@gmail.com